॥ ॐ श्री गुरुपरमात्मने नमः ॥

॥ श्री वेदांत विनोद ॥

प्रथम अंक ॥ १ ॥

अथ श्रीविचारचंद्रोदयकी षोडशकलाके अनुसार वेदांत पदावलिः प्रारम्यते ॥

॥ उपोद्घातवर्णन ॥ १ ॥

॥ मनहर छंद ॥

पुरुषइच्छा विषय पुरुषार्थ जोई सोई ।
दु खनाश सुखप्राप्तिरूप मोक्ष मानहु ॥
हेतु ताको ब्रह्मज्ञान सो परोक्ष अपरोक्ष ।
तामैं अपरोक्ष दृढ अदृढ दो जानहु ॥

॥ १ ॥ कोईबी रागके ध्रुवपदमें गाया जावे है ॥

मोक्षको साक्षात् हेतु दृढअपरोक्ष ज्ञान ।
हेतुं ता विचार जीवब्रह्मजग जानहु ॥
तीन वस्तुरूप जडचेतन दो जड मिथ्या ।
माया ब्रह्मचित् "सो मैं" पीतांवर स्यानहु ॥१॥

॥ प्रपंचारोपापवाद ॥ २ ॥

प्रपंचारोपापवाद करि निष्प्रपंच वस्तु-
ब्रह्म जानिके अवस्तु मायादिक मानिये ॥
ब्रह्म माया संबंध रु जीवईश भेद तिन ।
षट् ये अनादि तामें ब्रह्मानंत मानिये ॥
वस्तुमें अवस्तु कर कथन आरोप बाधि ।

॥ २ ॥ अन्वयः– ता (दृढअपरोक्षज्ञानका) हेतु विचार है ॥

॥ ३ ॥ ऐसें निश्चय करो ॥

॥ ४ ॥ अन्वयः– अवस्तु बाधि वस्तुकथन अपवाद मानिये ॥

अवस्तु वस्तु कथन अपवाद गानिये ॥
गुरुके प्रसाद यह युक्ति जानि पीतांबर ।
तेज तमकारज आरज निज जानिये ॥ २ ॥

॥ देह तीनका मैं द्रष्टा हूं ॥ ३ ॥

द्रष्टा तीन देहको मैं स्थूल सूक्ष्म कारण ये ।
तीन देह दृश्य अरु अनातमा मानियो ॥
पंचीकृत पंचभूतके पचीसतत्वनको ।
स्थूल देह एह भोग आयतन गानियो ॥
अपचीकृत भूतके सप्तदशतत्वनको ।
सूक्ष्मदेह सोइ भोग साधन प्रमानियो ॥
अज्ञान कारणदेह घटवत दृश्य यह ।
पीतांबर द्रष्टा आप जानि दृश्य मानियो ॥३॥

॥ ५ ॥ अन्वय – हे आरज (विवेकी) तमका रज तज । निज (स्वरूप) जानिये ॥

॥ मैं पंचकोशातीत हूं ॥ ४ ॥

पंच कोशातीत मैं हूं अन्न प्राण मनोमय ।
विज्ञान आनंदमय पंचकोश नातमा ॥
स्थूलदेह अन्नमय कोश लिंगदेह प्राण ।
मन रु विज्ञान तीन कोश कहें मातमा ॥
कारण आनंदमय-कोश ये८ कारज जड ।
विकारी विनाशी व्यभिचारीहीं अनातमा ॥
अज चित अविकारी नित्य व्यभिचारहीन ।
पीतांबर अनुभव करता मैं आतमा ॥ ४ ॥

॥ ६ ॥ आत्मा नहीं । अर्थ यह जो अनात्मा है ॥
॥ ७ ॥ महात्मा लिंगदेह[कू] प्राण मन अरु विज्ञान तीनकोशरूप कहैं हैं ॥
॥ ८ ॥ पंचकोश ॥

॥ तीनअवस्थाका मैं साक्षी हूं ॥ ५ ॥

अवस्था तीनको साक्षी आतमा अन्वय याको।
व्यभिचारी अवस्थाको व्यतिरेक पाईयो ॥
त्रिपुटी चतुरदश करि व्यवहार जहां ।
स्पष्ट सो जाग्रत जूठ ताकुं स्वप्न ध्याईयो ॥
देखे सुने वस्तुनके संस्कारसें सृष्टि जहां ।
अस्पष्ट प्रतीति स्वप्न मृषा लोक गाईयो ॥
सकल करण लय होय जैहां सुषुप्ति सो.।

॥ ९ ॥ या (आत्मा) को अन्वय (पुष्पमालामैं सूत्रकी न्याई तीनअवस्थामैं अनुस्यूतपना) है । यह अर्थ है ॥

॥ १० ॥ पुष्पनकी न्याई तीनअवस्थाका परस्पर औ अधिष्ठानतें भेद ॥

॥ ११ ॥ अन्वयः—जहां सकल करण लय होय। सो सुषुप्ति है ॥

पीतांबर तुरीयही प्रत्यक[12] प्रत्याईयो ॥ ५ ॥

॥ प्रपंच मिथ्या वर्णन ॥ ६ ॥

॥ ललित[14] छंद ॥

सकल दृश्य सोऽध्यास छोडना ।
जग अधारमें चित्त जोडना ॥
त्रय दशा[15]हि जो जाग्रदादि हैं ।
सब प्रपंच सो भिन्न नाहिं हैं ॥ ६ ॥
रजतआदि हैं सीपिमें यथा ।
त्रय दशा सु हैं ब्रह्ममें तथा ॥
रजत आदिवत् दृश्य ये मृषा ।

॥ १२ ॥ अंतरात्मा ॥

॥ १३ ॥ निश्चय कीयो ॥

॥ १४ ॥ श्रीमद्भागवतके दशमस्कंधके एकतीसवे अध्यायगत गोपिका गीतकी न्याई है ॥

॥ १५ ॥ तीनअवस्था ॥

शुगतिकादिवत् ब्रह्म अमृषा ॥ ७ ॥
अव्यभिचारैं मिथो रजत आदि ज्यों ।
इनहिकी मिथो व्यावृत्ती जु त्यों ॥
शुगति सूत्रवत् अनुग एक जो ।
अनुवृत्तीयुतो ब्रह्म आप सो ॥ ८ ॥
शुगतिकामहीं तीनै अंस ज्यूं ।
अजड ब्रह्ममें तीन अंस त्यूं ॥

॥ १६ ॥ सत्य है ॥

॥ १७ ॥ परस्पर ॥

॥ १८ ॥ रहा आदि शब्दकरि भौदल (अबरख) औ कागजका ग्रहण है ॥

॥ १९ ॥ भेद (अन्योन्याभाव) ॥

॥ २० ॥ पुष्पमालामें सूत्रकी न्याई ॥

॥ २१ ॥ अनुस्यूतताकरि युक्त ॥

॥ २२ ॥ सामान्य । विशेष । कल्पितविशेष । ये तीनअंश हैं ॥

उभैय अंसकूं सत्य जानिले ।
नैतिय त्यागदे मोक्ष तो मिले ॥ ९ ॥
भिदे भ्रमादि जो पंचधा भवं ।
त्रिविधतापता तप्त सो देवं ॥
परशु पंचधा युक्तियों करी ।
करि विचार तूं छेद ना हरी ॥ १० ॥

॥ २३ ॥सामान्य औ विशेष । इन दो अंशनकूं ॥

॥ २४ ॥ कल्पित अंशकूं ॥

॥ २५ ॥ भेदभ्रांतिसैं आदिलेके ॥ इहां आदि शब्दकरि कर्त्ताभोक्तापनेकी भ्रांति । संगभ्रांति । विकारभ्रांति । ब्रह्मतैं भिन्न जगतके सत्यताकी भ्रांति । इन च्यारिभ्रांतिनका ग्रहण है ॥

॥ २६ ॥ पांचप्रकारका संसार है ॥

॥ २७ ॥ वन है ॥

॥ २८ ॥ अन्वयः—पंचधा (पांचप्रकारकी) युक्तियो (दृष्टांतरूप) परशु (कुठार) करी ॥

नहि जु जाहिमैं तीन कालमैं ।
तहँहि भान व्है मध्यकालमैं ॥
शुगति रौप्यवत् ध्यास सो भ्रम ।
अरथज्ञान दो भांतिका क्रम ॥ ११ ॥
द्विविध वेम है ज्ञान अर्थको ।
अरथभ्रांति वा षड्विधा वको ॥
सकल ध्यास जे जगतमैं दसे ।

॥ २९ ॥ अन्वयः—सो वेम (अध्यास) अरथ (अर्थाध्यास) औ ज्ञान (ज्ञानाध्यास) [या] क्रम (क्रमसैं) दो भांतिका है ॥

॥ ३० ॥ अन्वयः—ज्ञान (ज्ञानाध्यास औ) अर्थ (अर्थाध्यास)को वेम (अध्यास) [प्रत्येक] द्विविध है ॥

॥ ३१ ॥ वा अरथ भ्रांति (अर्थाध्यास) षड्विधा षट्प्रकारको) वको (कहो) ॥

॥ ३२ ॥ दिखाये

सबशु याहिके बीचमें [३४]धँसे ॥ १२ ॥
निज चिदात्मकू ब्रह्म जानिके ।
सकल वेमको भूँल भानिके ॥
[३५]परम मोदकू आप बूजि ले ।
इहहि मुक्ति पीतांबरो मिले ॥ १३ ॥

॥ आत्माके विशेषण ॥ ७ ॥

॥ इंद्रविजय छंद ॥

आत्म विशेषण हैं जु दुभांति ।
विधेय निषेध्य कहीं निरधारे ॥
वे[३७]सब जानि भले गुरु शास्त्र सु ।

॥ ३३ ॥ प्रवेशकू पाये हैं ॥
॥ ३४ ॥ अज्ञान ॥
॥ ३५ ॥ परमानंदरूप ब्रह्मकू आत्मा जानीले ॥
॥ ३६ ॥ ठुमरी औ लावनीमें गाया जावे है ॥
॥ ३७ ॥ वे विशेषण ॥

सो अपनो निजरूप निहारे ॥
सच्चिदनंद रु ब्रह्म स्वयंपर- ।
काश कुटस्थ रु साक्षि विचारे ॥
द्रष्टृ अरु उपद्रष्टृ रु एकहि ।
आदि विधेय विशेषण धारे ॥ १४ ॥
अंतविहीन अखंड असंग रु ।
अद्वय जैन्मविना अविकारे ॥
आँरि अकारविना अरु व्यक्त ।
न मौननको विषयो जु निकारे ॥
कर्म करीहि बढे न घटे इस ।
हेतुहि अन्यय वेद पुकारे ॥

॥ ३८ ॥ अनंत ॥
॥ ३९ ॥ अजन्मा ॥
॥ ४० ॥ निराकार ॥
॥ ४१ ॥ अप्रमेय ॥

अक्षर नाशविना कहिये इस ।
आदि निषेध्य पीतांबर सारे ॥ १५ ॥

॥ सत्‌चित्‌आनंदका विशेपवर्णन ॥८॥

सच्चिदनंद सरूप हि मैं यह ।
सद्गुरुके मुखमें पहिचान्यो ॥
जाग्रत स्वप्न सुपुप्ति जु आदिक ।
तीनहुँ कालहि मैं परमान्यो ॥
जाग्रत आदि ^ध्यावधि तीनहुं ।
कालहि हाँ इसतें सत मान्यो ॥
तीनहुँ कालविपें सब जानहुं ।
पाहित मैं चिद्रूपहि जान्यो ॥ १६ ॥
मैं प्रिय हुं धन पुत्र रु पुद्गल ।
आदिकतें त्रयकाल अँगान्यो ॥

॥ ४२ ॥ स्थूल शरीर ॥
॥ ४३ ॥ तृप्त ॥

आतम अर्थ सबे प्रिय आतम ।
आपहि है प्रिय दुःख नसान्यो ॥
या हित मैं सबतें प्रियतम्मरु
हीं परमानंद दुःखहि भान्यो ॥
देह दशादि अतीत सु आतम ।
पूरण ब्रह्म पीतांबर गान्यो ॥ १७ ॥

॥ अवाच्यसिद्धांत वर्णन ॥ ९ ॥

ब्रह्म अहै मन वानि अगोचर ।
शास्त्र रु संत कहैं अरु ध्यावैं ।
वेद वदैं लछनादिक रीति रु ।
वृत्ति विआसि जनो मन लावैं ॥
हैं जु सदादि विधेय विशेषण ।
वे असदादिक भिन्न कहावैं ॥

॥ [illegible] ॥ अवस्था आदिकतैं ॥

सत्य अपेक्षिक आदि विरोधि[45] जु ।
अंस तजी परमार्थ लखावैं ॥ १८ ॥
हैं जु अनंत अखंड असंग रु ।
अद्वय आदि निषेध्य रहावैं ॥
वे परपंच निषेध करी अव-
शेषित वस्तु गिरा विन गावैं ॥
यूं परमातम आतम देव ही ।
वेद रु शास्त्र सबे सुरटावैं ॥
पंडित[47] त्यागि अभास पीतांबर ।

॥ ४५ ॥ आपेक्षिक सत्य । वृत्तिज्ञान औ विषयानंद आदिक विरोधि जो अंश है । ताकूं त्यागिके ॥

॥ ४६ ॥ वास्तवरूप जो निरपेक्षसत्य । चेतनरूपज्ञान औ स्वरूपानंद आदिक । ताकूं लक्षणासैं बोधन करे हैं ॥

॥ ४७ ॥ पंडित पीतांबर कहे है किः— आभास

वृत्ति अहं अपरोक्षहि पावै ॥ १९ ॥

॥ सामान्यविशेष चैतन्य वर्णन १.१

चेतन है जु समान विशेष सु ।
दो विध सत्य सुजान समानै ॥
भ्रांति सरूप विशेष जु कल्पित ।
संसृति आश्रय सो तिहि मानै ॥
ज्यों रविको प्रतिबिंब जलादिक ।
सो रविरूप विशेष पिछानै ।
त्यौं मतिमैं प्रतिबिंब परातम ।
सो कलपीत विशेष हि जानै ॥ २० ॥
आब्रह्म जावत लोक मलोक हि ।

(फलव्याप्तिकूं) त्यागिके अहंवृत्ति ' (वृत्ति व्याप्तिकरि) अपरोक्ष जानै । यह अर्थ है ॥

॥ ४८ ॥ परमात्माका प्रतिबिंब ॥

भोगत भोग जु कर्म निपाने ॥
सो सब चिंत अभास करै अरु ।
शुद्ध समान मही नहिं आने ।
अस्ति रु भाति प्रिय सब पूरन ।
ब्रह्म समान सु चेतन माने ॥
नाम रु रूप तजी सत चेतन ।
मोद पीतांबर आप पिछाने ॥ २१ ॥

॥ तत्त्वंपदार्थैक्य निरूपण ॥ ११ ॥

वाच्य रु लक्ष्य लखी तत त्वंपद ।
लक्ष्य दुहूकर एक ढदावै ॥
भिन्न जु देशहि काल सु वस्तु रु ।

॥ ४९ ॥ जो कर्मरचित भोग है । [ताकूं] भोगता है ॥

॥ ५० ॥ चेतनका प्रतिबिंब ॥

धर्म समेत उपाधि उडावै ॥
जन्म थिती लय कारक मौयिक ।
जाननहार सबी जग भावै ॥
ईश्वर वाच्य सुहै ततपादहि ।
ब्रह्म सुलक्ष्य उपाधि अभावै ॥ २२ ॥
संसृति मानत आपहिमें पर-
तंत्र ँअवियक अल्प जनावै ।
त्वंपद वाच्य सु जीव विवेचित ।
लक्ष्य सुसाक्षि उपाधि ढहावै ॥
वाच्य दुअर्थ हि भेद वि है पुनि ।
लक्ष्य विभेद न रंचक गावै ॥
ब्रह्म अह इस भांति जु जानत ।
सोई पीतांबर ब्रह्महि पावै ॥ २३ ॥

॥ ५१ ॥ माया उपाधिवान् ॥
॥ ५२ ॥ अविद्या उपाधिवान् ॥

॥ ज्ञानीके कर्मनिवृत्तिका प्रकार ॥ १२ ॥

॥ तोटकछंद ॥

जिन आतमरूप मैंयो जु भले ।
तिस त्रैविध कर्म मिटैं सकले ॥
तमैं आवृत्ति आश्रित संचित ले ।
निज बोध सु पावक सर्व जले ॥ २४ ॥
जड चेतन गांठ विभेद बले ।
द्वदराग द्वेष कषाय गले ॥
जलमैं जिम लिप्त न कंजदले ।
परसे न अगामि जु कर्म मले ॥ २५ ॥

॥ ५३ ॥ ठुमरीमैं गाया जावे है ॥

॥ ५४ ॥ देख्यो ॥

॥ ५५ ॥ अज्ञानकी आवरणशक्तिके आश्रित संचितकर्मोंकू लेके ॥

॥ ५६ ॥ कमलका पत्र ॥

इस जन्म अरंभक कर्म फले ।
सुख दुःखहि भोगत होत भले ॥
इस भांति जु होवत जन्म विले ।
चिद्रूप पीतांबर स्व विमले ॥ २६ ॥

॥ सप्तज्ञानभूमिका वर्णन ॥ १३ ॥

निज बोधकि भूमि सु सप्त अहै ।
इस भांति वसिष्ठ मुनीश कहै ॥
शुभ साधन संपति आदि लहै ।
श्रवणादि विचार द्वितीय वहै ॥ २७ ॥
निदिध्यासन तीसर भूमि गहै ।
अपरोक्ष निजातम चौथि चहै ॥
हमता ममता बिन पंचम है ।
छटवी सत्र वस्तु अकार दहै ॥ २८ ॥

॥ ५७ ॥ देखिके ॥
॥ ५८ ॥ योगवासिष्ठ ग्रथविषै ॥

सप्तमी तुरिया जु वरिष्ठित है ।
सब वृत्ति विलीन चिदात्म रहे ॥
ईवें गाढ सुषुप्ति न जागत है ।
परमानंद मत्त पीतांबर है ॥ २९ ॥

॥ जीवन्मुक्ति विदेहमुक्ति वर्णन ॥ १४ ॥

जब जानत है निज रूपहिकूं ।
तब जीवन्मुक्ति समीपहि कूं ॥
भ्रमबंध निवृत्ति सदेह हिकूं ।
सुख संपति होवत गेहहिकूं ॥ ३० ॥
विदवान तजे इस देहहिकूं ।

॥ ५९ ॥ गाढसुषुप्ति इव (वत्) ॥

॥ ६० ॥ तब शरीरसहित पुरुषकूं भ्रमरूप बंधकी निवृत्तिस्वरूप जीवन्मुक्ति समीपहीकू (तत्काल होवे है) यह अर्थ है ॥

तव पावत मुक्ति विदेहहिकूं ॥
तम लेश भजे सद नाशहिकूं ।
तन देत प्रपंच अमासहिकूं ॥ ३१ ॥
सरितों इव सागर देशहिकूं ।
चिनमात्र मिलाय [62] विशेषहिकूं ॥
चिद होय भजे अवशेषहिकूं ।
नहि जन्म पीतांबर शेषहिकूं ॥ ३२ ॥

॥ वेदांतप्रमेय (पदार्थ) वर्णन ॥ १५॥

॥ ललित छंद ॥ (गोपिकागीतवत्)

जन तु जानिले [63] ज्ञेय अर्थकूं ।

॥ ६१ ॥ सागरदेशहिकू सरिता इव (नदीकी न्याई) ॥

॥ ६२ ॥ स्थूलसूक्ष्म प्रपंचसहित चिदाभासरूप विशेषकूं ॥

॥ ६३ ॥ वेदांतके प्रमेयरूप पदार्थनकूं ॥

सकल छेद मं दे अनर्थकूं ॥
मुगति कौन है हेतु ताहिको ।
जँनक बीचको कौन वाहिको ॥ ३३ ॥
विपय बोधको कौन जानिले ।
प्रतक ईशको तत्व मानिले ॥
अँहम अर्थकूं सूच खोजिले ।
तत पदार्थकू शुद्ध सोजिले ॥ ३४ ॥
पँरम आतमा एक मानि ले ।
तहँ सदादि ऐश्वर्य आनि ले ॥
सत चिदात्म सो सर्वदा अहै ।

॥६४॥ वाहिको (मोक्षके हेतु ज्ञानको) बीचको जनक (अवांतरसाधन) कौन है ॥

॥ ६५ ॥ अहं (त्वं) पदके अर्थकूं ॥

॥ ६६ ॥ ब्रह्म ॥

॥ ६७ ॥ सच्चिदानद स्वरूप सो (ब्रह्मआत्माकी एकता) सर्वदा (तीनोकालमें) है ॥

इम पीतांबरो ज्ञानकूं गहै ॥ ३५ ॥

॥ षोडशकला वर्णन ॥ १६ ॥

निपकलं निजं वेदही वदे ।
षट दर्श कला ब्रह्ममें न दे ॥
निरवयेव जो निष्कलंक सो ।
इकरसं सदा अंगता न सो ॥ ३६ ॥
हिरण्यगर्भ औ श्रद्धया भयो ।
पवन तेज कं भूमि इंद्रियो ॥
मन अनाज औ [६८]शक्ति सत्तपो ।
करमलोक नामार्मनूंजपो ॥ ३७ ॥
षट दर्श कला एहि जानिले ।
जड उपाधिको धर्म मानिले ॥

॥ ६८ ॥ बल ॥
॥ ६९ ॥ मंत्रका जप ॥

अनुगताथयो पुष्पसूत्रवत् ।
निज चिदात्म पीतांबरो हि सत् ॥ ३८ ॥

॥ दोहा ॥

पांचकलाहि कवित्तमैं । पांच सवैया मांहि ॥
ललित छंदमें तीन हैं तोटकमें नव आहि ॥ १ ॥
पांचकवित्त दशसवैया । चौदा ललित पिछान ॥
नवतोटक एकत्र करि । अठतिस छंद प्रमान ॥२॥
विचारचंद्रोदयकला । षोडस सार निचोड ॥
पीतांबरनै गानियो । वर षोडश पद जोड ॥३॥
जो जन यह षोडशपदी । समुज गाय मन लाय ॥
सो निजबोध सुपायके । पुनर्जन्म नहि आय ॥४॥

॥ संस्कृत दोहा ॥

श्री विचारचंद्रोदयं शुद्धां धियं समाध्य ॥
विचार्येति परानंदं तत्त्वज्ञानमवाप्य ॥ ९ ॥

ब्रह्मनिष्ठपंडित श्रीपीतांवरजीकृत

॥ हिंदुस्थानी भाषाके पद ॥

राग समयानुसार ॥ १ ॥

रामरूप हैं मेरे सद्गुरु ।
रामरूप हैं मेरे रे ॥
रमत चतुर्दश लोक लीलाकृत ।
दमत दोष वहुतेरे रे ॥ टेक ॥
निजअनुभव जिन मोहि वताया ।
श्रुति स्मृति शब्दहि टेरेरे ॥
कर्णरंध्र मग चले अंत तन ।
काम क्रोध लिये घेरे रे ॥ १ ॥
सत् चित् आनद रूप स्वयं निज ।
पूरन ब्रह्म ढेरे रे ॥

जुंहाँ है अम रह्यो रुपासरि ।
त्युंहाँ लयो तिहि घेरे रे ॥ २ ॥
संशय भ्रमहिं मिटे मनके सब ।
भये मुशात मुखेरे रे ॥
गुरुनापू पद पद्म पीतांबर ।
लये गये भव फेरे रे ॥ ३ ॥

राग आशा ॥ २ ॥

सो कैसें कहिये ज्ञानी ।
जाकी वृत्ति विवेक विहानी ॥ टेक ॥
हरि गुरु भक्ति शमादिक साधन ।
धारि न बुद्धि विषय रस सानी ।
जन्म अनत भोगे न अगानी ॥ १ ॥
मोक्षरूप साधन नहिं जानी ।
ज्ञानरूप साधन न पिछानी ।
ज्ञेयवस्तु मनमें नहीं आनी ॥ २ ॥

देह अवस्था कोश जगततैं ।
 चेतनको नहिं भिन्न लखानी ।
 निज तत्त्व असग न गानी ॥ ३ ॥
तत्त्वं पदको वाच्य लक्ष्य लखि ।
 लक्ष्य दुहुनको एक न मानी ।
 अज्ञान जगत नहिं भानी ॥ ४ ॥
पीतांबर कहे संशय भ्रम तजि ।
 वृत्ति न ब्रह्मरूप ठहरानी ।
 जहा नहिं पहुचे मन वानी ॥ ५ ॥

राग आशा ॥ २ ॥

सो सज्जन कहिये ज्ञानी ।
 जाकी खुलि अनुभवकी खानी ।
 सो सज्जन कहिये ज्ञानी ॥ टेक ॥
साधन चारिकी धारि निसानी ।
 विधिवत शरण गह्यो गुरु ज्ञानी ।

ब्रह्मातमको शोधन ध्यानी ॥ १ ॥
महावाक्य अर्थ जिय आनी ।
श्रवन मनन निदिध्यास करानी ।
मान मेय संशय भ्रम हानी ॥ २ ॥
जीव रु ईश भाव विसरानी ।
बंध मोक्षकी बुद्धि बिलानी ।
अहंब्रह्म अस निश्चय ठानी ॥ ३ ॥
द्वैतबुद्धि जाकी जो नसानी ।
ज्यो,तरंग परपोटा पानी ।
सहज समाधि स्थिती ठहरानी ॥ ४ ॥
सद्गुरु बापू पदरज परसी ।
पीतांबर जु भयो ब्रह्मज्ञानी ।
गुरु शास्त्र जगत ब्रह्म जानी ॥ ५ ॥

ॐ

श्रीवेदांतविनोद ॥

द्वितीय अंक ॥ २ ॥

॥ श्रीवेदांतपदार्थसंज्ञा ॥

ब्रह्मनिष्ठपंडितश्रीपीतांबरजीकी
आज्ञाअनुसार
शरीफ सालेमहंमदनै
छपाई प्रकट किया ॥

श्रीमुंबईमें निर्णयसागरप्रेसमें छपा.

॥ संवत् १९४२–सन् १८८६ ॥

॥ प्रस्तावना ॥

मंगल ॥ दोहा ॥

श्रीगुरुके पद वंदिके यह वेदांतविनोद ।
प्रकट करों जिस करि सर्व सज्जन पावहु मोद १

श्रीवेदांतविनोदमें लघुग्रंथ प्रकट किये जातेहैं ॥ तिन ग्रंथोंके नाम इस ग्रंथके प्रत्येक अंकके अंतमें दृष्ट पडेंगे ॥ परमदयालु ब्रह्मनिष्ठपंडित श्रीपीतांबरजी महाराजकी सहायतासें वेदांतविनोदके अंक प्रगट किये जाते हैं ॥

वेदांतपदार्थसंज्ञा नामक प्राचीन ग्रंथ है । तिसपर "पदार्थमंजूषा" नामक व्याख्या महात्मा मलूकचंद ज्ञानीने करीहै सो "पदार्थमंजूषा" ब्रह्मनिष्ठ पंडित श्रीपीतांबरजीने शोधन करि प्रकट किया है ॥ यह लघुग्रंथ श्रीविचारचंद्रोदयमें षोडशकलारूपसें जो प्रकट किया है ॥

"अजिव्हत्वादि ६।१४०" आदिक अकारादि अनुक्रमसें रखे हैं । तहां ६ का अंक षट्पदार्थनका सूचक है । औ १४० का अंक । पदार्थसंख्याकके अनुक्रमांक जो श्रीपदार्थमंजूषामें रखे हैं । तिनका सूचक है ॥ जिन पुरुषनके पास पदार्थमंजूषा है तिनोंके वास्ते यह सुलकर अनुक्रमणिका है । औ मुमुक्षुनकूं पदार्थस्मृतिमें सहायक है ॥

शरीफ सालेमहंमद.

ॐ

पदार्थमंजूषागत

मंगलाचरणं

ब्रह्मनिष्ठपंडितश्रीपीतांबरजीकृतम्.

॥ नाराचवृत्तम् ॥

कलं कलंक कज्जलं तमः प्रलापि सज्जलं ।
गतातिचंचलाचलं सुशांतिशीलमुज्ज्वलम् ॥
सदा सुखादिकंदलं त्रितापपापशामकं ।
नमामि ब्रह्मधामकं सनापुरामनामकम् ॥ १ ॥
समानदानदायकं भवाब्धवाक्यसायकं ।
सुशुद्ध धीविधायकं मुनींद्र मौळिनायकम् ॥
स्वसंगगीतगायकं व्यक्त त्रिलोकरामकं ।
नमामि ब्रह्मधामकं सनापुरामनामकम् ॥ २ ॥
शमक्षमादिलक्षणं मतिक्षणं स्वशिक्षणं ।

मुमुक्षुरक्षणे क्षमं क्षमेषु वै विलक्षणम् ॥
सुलक्ष्य लक्ष्य संशयं हरं गुरुं हि मामकं ।
नमामि ब्रह्मधामकं सवापुरामनामकम् ॥ ३ ॥
कलेशलेशवेशशून्यदेशके भवेशकं ।
गताविशेषशेषकं ह्यशेषवेषदेशकम् ॥
परेशकं भवेशकं समस्तभूपभामकं ।
नमामि ब्रह्मधामकं सवापुरामनामकम् ॥ ४ ॥
सकालकालिजालभालभेदिभानभञ्जकं ।
प्रभिन्नखिन्नतुन्नभाविजन्ममत्त मञ्जकम् ॥
सभेदखेदछेदवेदवाक्ययूथयामकं ।
नमामि ब्रह्मधामकं सवापुरामनामकम् ॥ ५ ॥
भवाष्टकष्टपाशदासभावभासनाशकं ।
सुशुद्धसत्त्वबुद्धतत्त्वब्रह्मतत्त्वभासकम् ॥
स्वलोकशोकशोषकं वितोषदोषवामकं ।
नमामि ब्रह्मधामकं सवापुरामनामकम् ॥ ६ ॥

सबंधुजन्मसिंधुपारकारिकर्णधारकं ।
सलोभशोभकोपगोपरूपमारमारकम् ॥
स्वबालकालवारकं समास्तसर्वकामकं ।
नमामि ब्रह्मधामकं सबापुरामनामकम् ॥ ७ ॥
स्वलक्ष्यदक्षचक्षुषं स्वरूपसौख्यसंजुषं ।
कृतार्थचेतनाखुषं गतार्थगामितस्थुषम् ॥
विभोग्यजातदुर्विषं सुषं गुणालिदामकं ।
नमामि ब्रह्मधामकं सबापुरामनामकम् ॥ ८ ॥
भवाटवीविहारकारि जीवपांथपारदं ।
सुयुक्तिमुक्तिहारसारदं सुबुद्धिशारदम् ॥
सपीतपादुकांबरो ब्रवीतितं स्वरामकं ।
नमामि ब्रह्मधामकं सबापुरामनामकम् ॥ ९ ॥
श्रीमन्मंगलमूर्तिपूर्तिसुयशः-
स्वानंदवान्युल्लसत् ।
सौभाग्यैकसरित्पतिं मतिहत-

मोद्भूततापत्रयम् ॥
संसारसृतिभ्रमभ्रममनसा-
मुद्धारकं कागतं ।
प्रत्यक्तत्त्वसुचिरस्वरूपसुगुरुं
रामं भजेऽहं मुदा ॥ १ ॥

॥ ॐ गुरुपरमात्मने नमः ॥

॥ श्रीवेदांतविनोद ॥

द्वितीय अंक ॥ २ ॥

॥ अथ श्री वेदांतपदार्थसंज्ञा ॥

अजिव्हत्वादि ६।१४०	तलातल
अजिव्हत्व	रसातल
नपुंसकत्व	महातल
पंगुत्व	पाताल
अंधत्व	अध्यात्मताप ३।१.७
बधिरत्व	आधि (मानसताप)
मुग्धत्व	व्याधि (शारीरताप)
अतलादि ७।१४९	अध्यात्मादि ३।६९
अतल	इंद्रिय (अध्यात्म)
वितल	देवता (अधिदैव)
सुतल	विषय (अधिभूत)

विक्षेप

अभाव ५ । १२६

प्रागभाव
प्रध्वंसाभाव
अन्योऽन्याभाव
अत्यंताभाव
सामयिकाभाव

अरिवर्ग ६ । १२८

काम । मोह
क्रोध । मद
लोभ । मत्सर

अर्थवाद ३ । ६८

अनुवाद
गुणवाद
भूतार्थवाद

अवधि ३ । ५३

बोधकी
वैराग्यकी
उपरामकी

अवस्था ३ । २९

जाग्रत । सुषुप्ति
स्वप्न

अवस्था ७ । १४६

अज्ञान
आवरण
विक्षेप
परोक्षज्ञान
अपरोक्षज्ञान
शोकनाश
तृप्ति

अवस्था ६ । १३३

शिशु । किशोर
कौमार । यौवन
पौगंड । जरा

असंभावना २।८
- प्रमाणगत
- प्रमेयगत

अहंकार २।१४
- शुद्ध (सामान्य)
- अशुद्ध (विशेष)

अज्ञान २।२
- समष्टि । व्यष्टि

अज्ञानकी शक्ति २।५
- आवरणहेतु
- विक्षेपहेतु

अज्ञानके भेद ५।१२२३
- मायाअविद्यारूप
- ज्ञानक्रियाशक्तिरूप
- विक्षेपआवरणरूप
- समष्टिव्यष्टिरूप
- कारणरूप

आत्मा ३।६९
- ज्ञानात्मा । शांतात्मा
- महानात्मा

आत्माकेधर्म१२।१६९
- नित्य । अविक्रय
- अव्यय । स्वप्रकाश
- शुद्ध । हेतु
- एक । व्यापक
- क्षेत्रज्ञ । असंगी
- आश्रय । अनावृत

आत्माके भेद ३।७२
- मिथ्यात्मा । मुख्यात्मा
- गौणात्मा

आनंद ३।६०
- ब्रह्मानंद
- विषयानंद
- वासनानंद

आन्ध्यादि ३ । ५५
आन्ध्य । मांद्य । पटुत्व

आर्तादि भक्त ४ । ९७
आर्त । अर्थार्थी
जिज्ञासु । ज्ञानी

आश्रम ४ । ८२
ब्रह्मचर्य
गृहस्थ
वानप्रस्थ
सन्यास

ईश्वरके भग ६ । १४३
समग्रऐश्वर्य
समग्रधर्म
समग्रयश
समग्रश्री
समग्रज्ञान
समग्रवैराग्य

ईश्वरकें ज्ञान ६ । १४४
उत्पत्ति । आगति
प्रलय । विद्या
गति । अविद्या

उत्पत्त्यादिक्रिया ४ । ९८
उत्पत्ति । विकार
प्राप्ति । सस्कार

उद्देशादि ३ । ७५
उद्देश । परीक्षा
लक्षण

उपवायु ५ । १०८
नाग । देवदत्त
कूर्म । धनजय
कृकर

उपासना २ । २३
सगुण । निर्गुण

उर्मि ६ । १३१
जन्म । तृषा
मरण । हर्ष
क्षुधा । शोक

एषणा ३ । ५५
पुत्रैषणा
वित्तैषणा
लोकैषणा

करण ३ । ३०
मन । वाणी । काय

कर्तव्यादि ३ । ७३
कर्तव्य । प्राप्तव्य
ज्ञातव्य

कर्म ३ । ३१
पुण्य । पाप । मिश्र

कर्म ३ । ६१
संचित । आगामी
प्रारब्ध

कर्म ५ । १०९
नित्य । प्रायश्चित्त
नैमित्तिक । निषिद्ध
काम्य

कर्म ६ । १३७
स्नान । अर्चन
जप । आतिथ्य
होम । वैश्वदेव

कर्मइंद्रिय ५ । १०५
वाक् । उपस्थ
पाणि । गुद
पाद

कर्मादि ३ । ७४
कर्म । अकर्म
विकर्म

कारणवाद ३ । ४०

आरंभ । विवर्त
परिणाम
काल ३ । ४२
भूत
भविष्यत्
वर्तमान
कोश ५ । १०२
अन्नमय
प्राणमय
मनोमय
विज्ञानमय
आनंदमय.
कौशिक ६ । १३०
त्वक् । मेद
मांस । मज्जा
रुधिर । अस्थि
क्लेश ५ । १२०
अविद्या
अस्मिता
राग
द्वेष
अभिनिवेश
ख्याति ५ । ११९
असत्
आत्म
अन्यथा
अख्याति
अनिर्वचनीय
गन्ध २ । १६
सुगंध । दुर्गंध
गुण ३ । ४१
सत्व । रज । तम
चैतन्य ७ । १४७
ईश्वर । प्रमाण

जीव । प्रमेय	तप ।
शुद्ध । प्रमा	विसंवादाभाव
प्रमाता	दुःखनिवृत्ति
जाग्रत ३ । ६२	सुखप्राप्ति
जाग्रत जाग्रत	**तत्व ९।१६९**
जाग्रत स्वप्न	श्रोत्र । मन
जाग्रत सुषुप्ति	त्वक् । बुद्धि
जाति २ । २४	चक्षु । चित्त
पर । व्याप्य	जिव्हा । अहंकार
अपर । व्यापक	घ्राण
जीव ३ । २७	**तादात्म्य ३ । ५६**
पारमार्थिक (प्राज्ञ)	भ्रमज ।
व्यावहारिक (विश्व)	सहज ।
प्रातिभासिक (तैजस)	कर्मज ।
जीवन्मुक्तिके प्रयोजन	**ताप ३ । ३९**
५।१२१	अध्यात्म । अधिभूत
ज्ञानरक्षा ।	अधिदैव

त्रिपुटी १४ । १७२
देखो वि. चं. पृष्ठ ९५

दृष्टांत ५ । ११८
शुक्तिविषै रजत
रज्जुविषै सर्प
स्थाणुविषै पुरुष
गगनविषै नीलता
मरीचिकाविषै जल

द्रव्यादिपदार्थ ७।१५५
द्रव्य । समवाय
गुण । अभाव
कर्म । विशेष
सामान्य ।

धर्मादि ४ । १००
धर्म । काम
अर्थ । मोक्ष

धातु ७ । १६२
रस । मज्जा
रुधिर । अस्थि
मांस । रेत
मेद

नाडिका औ देवता १० । १६६
इडा (चंद्र) हरि
पिंगला (सूर्य) ब्रह्मा
सुषुम्णा (मध्यमा) रुद्र
गांधारी (दक्षिणनेत्र) इंद्र
हस्तिजिव्हा (वामनेत्र) वरुण
पूषा(दक्षिणकर्ण)ईश्वर
यशस्विनी (वामकर्ण) ब्रह्मा
कुहु (गुदा) पृथ्वी

स्पर्शन
केलि
कीर्तन
गुह्यभाषण
संकल्प
निश्चय
क्रियाजन्यसुख

(इत्यष्ट विपरीत ।)

ब्रह्मविदादि ४ । ९२
ब्रह्मवित्
ब्रह्मविद्वर
ब्रह्मविद्वरीयान्
ब्रह्मविद्वरिष्ठ

ब्राह्मणकेव्रत १.२ । १.७१
ज्ञान । लज्जा
सत्य । तितिक्षा
शम । अनसूया
दम । यज्ञ
श्रुत । दान
अमात्सर्य । धैर्य

भागवतधर्म १३।१७२
सकामकर्मके फलका विपरीत दर्शन ।
धनगृहपुत्रादिकविषै दुःखबुद्धि औ चलबुद्धि ।
परलोकविषै नश्वरबुद्धि ।
शब्दब्रह्म औ परब्रह्मविषै कुशल गुरुप्रति गमन ।
गुरुविषै ईश्वरबुद्धि औ निष्कपट सेवा ।
परमेश्वरविषै सर्व कर्म

समर्पण ।
भक्तिवैराग्यसहित स्वरूपानुभव ।
साधुसंग ।
शौच । तप । तितिक्षा । मौन ।
स्वाध्याय । आर्जव ।
ब्रह्मचर्य । अहिंसा ।
औ द्वंद्वसमत्व ।
सर्वत्र आत्मारूपईश्वरका दर्शन ।
कैवल्य । ग्रहनबांधना ।
अनिकेतता । एकांत (विविक्त) चीरवस्त्र ।
संतोष ।
सर्वभूतनविषै आत्माके भगवद्भावका दर्शन औ भगवद्रूपआत्माविषै सर्वभूतनका दर्शन ।
जन्मकर्म वर्णाश्रमादि करि देहविषै निरभिमान औ स्वपरबुद्धिका अभाव ।

भूतग्राम ४ । ९१
जरायुज । उद्भिज्ज
अंडज । स्वेदज

भूमिका ७ । १५०
शुभेच्छा
सुविचारणा
तनुमानसा
सत्वापत्ति
असंसक्ति

पदार्थाभाविनी
तुरीयगा
भूरादिलोक ७।१४८
भूर् । जन
भुवर् । तप
स्वर् । सत्य
महर्
भेद ५। १२५
जीवईशका भेद
जीवजीवका भेद
जीवजडका भेद
ईशजडका भेद
जडजडका भेद
भ्रम ५। ११६
भेद । विकार
कर्तृत्व । सयत्व
संग

भ्रम ६। १४१
कुल । वर्ण
गोत्र । आश्रम
जाति । नाम
भ्रमविवर्त दृष्टांत ५।
११७
बिंबप्रतिबिंब
लोहितस्फटिक
घटाकाश
रज्जुसर्प
कनककुंडल
मद ८। १६१
कुल । यौवन
शील । विद्या
धन । तप
रूप । राज्य

महत्ता हेतुधर्म
१२ । १७०
धनाढ्यता । तेज
अभिजन । प्रभाव
रूप । बल
तप । पौरुष
श्रुत । बुद्धि
ओज । योग
महायज्ञ ५ । १२२
देव । मनुष्य
ऋषि । भूत
पितर
मायाकेनाम १९।१७४
माया । सत्या
अविद्या । मूला
प्रकृति । तूला
शक्ति । योनी
अव्यक्त
अव्याकृत
अजा
अज्ञान
तम
तुच्छा
अनिर्वचनीया
मिश्रकर्म ३ । ३४
उत्कृष्ट । सामान्य
मध्यम
मूर्ति ३ । ४३
ब्रह्मा । विष्णु । शिव
मूर्तिमद ८ । १६२
पृथ्वी । आकाश
जल । चंद्र
तेज । सूर्य
पवन । आत्ममद

मैत्र्यादि ४।९०
मैत्री । मुदिता
करुणा । उपेक्षा

मोक्षद्वारपाल ४।१०१
शम । विचार
संतोष । सत्संग

मौनादि ७।१५१
मौन
योगासन
योग
तितिक्षा
एकांतशीलता
निःस्पृहता
समता

यम ५।११२
अहिंसा । ब्रह्मचर्य
सत्य । अपरिग्रह
अस्तेय

युक्ति ४।९९
अध्यात्मविद्या
साधुसंग
वासनात्याग
प्राणायाम

योगभूमिका ५।११४
क्षेप । एकाग्र
विक्षेप । निरोध
मूढ

योगभूमिका ४।९४
वाणीलय
मनोलय
बुद्धिलय
अहंकारलय

रस ६।१४२
मधुर । कटुक

आम्ल । कषाय
लवण । तिक्त
रूप ७ । २५४
शुक्ल । हरित
कृष्ण । कपिश
पीत । चित्र
रक्त
लक्षण २ । २०
स्वरूपलक्षण
तटस्थलक्षण
लक्षणदोष ३ । ७६
अव्याप्ति । असंभव
अतिव्याप्ति
लिंग ६ । १३२
उपक्रम उपसंहार
अभ्यास
अपूर्वता

फल
अर्थवाद
उपपत्ति
लोक ३ । ४६
स्वर्ग । मृत्यु । पाताल
वचनादि ५ । १०६
वचन । रति
आदान । मलत्याग
गमन
वर्ण ४ । ८२
ब्राह्मण । वैश्य
क्षत्रिय । शूद्र
वर्तमान प्रतिबंध४।७८
विषयासक्ति
बुद्धिमांद्य
कुतर्क
विपर्ययदुराग्रह

वाक्य २ । १९
- अवांतरवाक्य
- महावाक्य

वाद २ । १८
- प्रतिबिंबवाद
- अवच्छेदवाद

वादादि ३ । ७७
- वाद । जल्प । वितंडा

वासना ३ । ४८
- लोकवासना
- शास्त्रवासना
- देहवासना

विकार ६ । १२९
- जन्म
- अस्तिता
- वृद्धि
- विपरिणाम
- अपक्षय
- विनाश

विधिवाक्य ३ । ६९
- अपूर्वविधि
- नियमविधि
- परिसंख्याविधि

विपरीतभावना २।९
- प्रमाणगत
- प्रमेयगत

विवेकादि ४ । ८४
- विवेक
- वैराग्य
- षट्संपत्ति
- मुमुक्षुता

वेद ४ । ८७
- ऋग् । साम
- यजुष् । अथर्वण

स्पर्श । गंध	शृंगारादि रस १० ।
रूप ।	१६७
शमादि ६ । १३९	शृंगार । भयानक
शम । तितिक्षा	वीर । बीभत्स
दम । श्रद्धा	करुणा । रौद्र
उपरति । समाधान	अद्भुत । शांति
शरीर ३ । २८	हास्य । प्रेमभक्ति
स्थूल । कारण	श्रवणादि ३ । ४९
सूक्ष्म	श्रवण
शास्त्र ६ । १३४	मनन
सांख्य	निदिध्यासन
योग	श्रवणादिफल ३ । ८०
न्याय	प्रमाणसंशयनाश
वैशेषिक	प्रमेयसंशयनाश
पूर्वमीमांसा	विपर्ययनाश
उत्तरमीमांसा	संशय २ । ७
	प्रमाणगत

ज्ञाता । भोग	कात्यायन
ज्ञान । कर्ता	वैखानसोप
ज्ञेय । करण	**सूक्ष्मभूत ५ । ११०**
भोक्ता । क्रिया	शब्द । रस
भोग्य	स्पर्श । गंध
सुषुप्ति ३ । ६४	रूप
सुषुप्तिजाग्रत	**सूक्ष्मशरीर २ । ३**
सुषुप्तिस्वप्न	समष्टि । व्यष्टि
सुषुप्तिसुषुप्ति	**स्थूलभूत ५ । १११**
सुषुप्त्यादि ३ । ५९	आकाश । जल
सुषुप्ति । समाधि	वायु । पृथ्वी
मूर्छा	तेज
सूत्र ६ । १३५	**स्थूलशरीर २ । ४**
जैमिनीय	समष्टि । व्यष्टि
आश्वलायन	**स्पर्श ४ । ९६**
आपस्तंब	शीत । कोमल
बौधायन	उष्ण । कठिन

श्रीवेदांतविनोद.

इस नामसें अनेक लघुग्रंथ प्रकट किये जाते हैं ॥ तिनमें वेदांतपदावलि तथा वेदांतपदार्थसंज्ञा छपे हैं ॥ प्रत्येक अंकको कीमत ०)= रखी है । औ कोइबी ७ अंकका मान रु० ०॥। पडेगा.

१ वेदांपदावलि (श्रीविचारचंद्रोदयका सार)
२ वेदांतपदार्थसंज्ञा.
३ सूफीओंके गजल.
४ देवाभक्तके पद.
५ अखाभक्तके पद.
६ प्रस्ताविक श्लोक अर्थसहित.
७ वेदांतस्तोत्र संग्रह अर्थसहित.

इनसें आदिलेके अनेक लघुग्रंथ ऊपरि लिखे क्रमसें नहीं परंतु समयसंजोग अनुसार प्रकट किये जावेंगे ॥

ॐ

॥ श्रीवेदांतविनोद ॥

तृतीयअंक ॥ ३ ॥

॥ श्रीवेदांतस्तोत्रसंग्रह ॥ १ ॥

ब्रह्मनिष्ठपंडित श्रीपितांबरजीकृत
भाषादीपिका सहित
सर्वमुमुक्षुके हितार्थ

शरीफ सालेमहंमदने

छपाई प्रकट किया ॥
श्रीमुंबईमें निर्णयसागरप्रेसमें छपा ॥

॥ संवत् १९४४—सन् १८८८ ।

॥ प्रस्तावना ॥

मंगल ॥ दोहा ॥

श्रीगुरुके पद वंदिके यह वेदांतविनोद ॥
प्रकट करौं जिस करि सबै सज्जन पावहु मोद १

बहुत मुमुक्षुजन श्रीमच्छंकराचार्यकृत औ अन्यमहात्माकृत संस्कृतस्तोत्रनकूं पाठ किंवा कंठ करते हैं। परंतु निष्ठाकी आरूढतामैं उपयोगी तिन स्तोत्रनके अर्थ निश्चय करनेमैं पराधीनताकूं अनुभव करते हैं। तातैं परमकारुणिक ब्रह्मनिष्ठपंडित श्रीपीतांबरजीनैं दयाकरिके स्तोत्रनकी भाषा करी है। औ संस्कृतमैं अल्पअभ्यासवानकूं बी प्रत्येकशब्दके अर्थका बोध होवै। तातैं मूलमैं औ भाषामैं अन्वयअनुसार अंकोंकूं रखे हैं॥

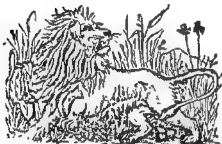
श्रीवेदांतविनोदके इस तृतीयअंकमैं जितनै स्तोत्र छपे हैं सो नीचे लिखे हैं:—

श्रीप्रातःस्मरणस्तोत्रम् ॥ १ ॥
श्रीचर्पटपंजरिकास्तोत्रम् ॥ २ ॥
श्रीमुक्तिपंचकम् ॥ ३ ॥
श्रीविज्ञाननौका ॥ ४ ॥

औ अन्य स्तोत्र बी चतुर्थादिअंकोंविषै छापे हैं ॥

शरीफ सालेमहंमद.





तावद्गर्जंति शास्त्राणि जंबुका विपिने यथा ॥
न गर्जति महाशक्तिर्यावद्वेदांतकेसरी ॥ १ ॥

अर्थः—जैसे वनविषै श्याल नामक पशुविशेष तहांलगि गर्जते हैं। जहांलगि सिंह नहीं गर्जता है ॥ तैसे अन्य सांख्यन्यायादिक—शास्त्र तहांलगि गर्जते हैं । जहांलगि महाशक्तिमान् वेदांतशास्त्ररूप सिंह नहीं गर्जता है ॥

॥ ॐ गुरुपरमात्मने नमः ॥

॥ श्रीवेदांतविनोद ॥

तृतीयअंक ॥ ३ ॥

॥ श्रीवेदांतस्तोत्रसंग्रहमारंभः ॥ १ ॥

अथ श्रीप्रातःस्मरणस्तोत्रम् ॥ १ ॥

॥ वसंततिलका छंदः ॥

प्रातः स्मरामि हृदि संस्फुरदात्मतत्त्वं
सच्चित्सुखं परमहंसगतिं तुरीयम् ॥
यत्स्वप्नजागरसुषुप्तमवैति नित्यं
तद्ब्रह्म निष्कलमहं न च भूतसंघः ॥१॥

अर्थः—१प्रातःकालमैं २हृदयकमलविषै अंतःकरण औ ताकी वृत्तिनका साक्षी होनेकरि अहंवृत्तिविषै स्वयंप्रकाशरूपकरि स्फुरायमान (भासमान)। ३सच्चिदानंदमय परमहंसोंकी ग-

तिरूप तुरीयस्वरूप जो ४आत्मतत्त्व है । ताकूं ५मैं स्मरण करूं हूं ॥ कैसें कि:–६ जो स्वप्न जाग्रत् अरु सुषुप्तिकूं जानता है । औ नित्य (उत्पत्ति अरु नाशसें रहित) है । औ ७निष्कल (निरवयव) है । औ ८ब्रह्म (सर्वसें अधिकव्यापक परमात्मा) है । ९सो १०मैं हूं । ११ अरु पंचभूतनका समुदाय में १२नहीं हूं ॥ १ ॥

प्रातर्भजामि मनसो वचसामगम्यं
वाचो विभांति निखिला यदनुग्रहेण ॥
यन्नेतिनेतिवचनैर्निगमा अवोचु-
स्तं देवदेवमजमच्युतमाहुरग्र्यम् ॥ २ ॥

अर्थः–१प्रातःकालमें २मन अरु वाणीओंके अविषय । औ ३सर्व ४वाणीआं ५जिसके अनुग्रहसें ६भान होवे हैं । औ ७जाकूं "नेतिनेति" [प्रपंचके निषेधक]वचनोंकरिके वेद कहते है ।

औ जाकूं ब्रह्मवेत्ते ८देवनका- देव अजन्मा अ-
च्युत अरु ९मुख्य १०कहते हैं । ११ताकूं
१२मैं भजता हूं ॥ २ ॥

प्रातर्नमामि तमसः परमर्कवर्णं
पूर्णं सनातनपदं पुरुषोत्तमाख्यम् ॥
यस्मिन्निदं जगदशेषमशेषमूर्तौ
रज्ज्वां भुजंगम इव प्रतिभासितं वै ॥३॥

अर्थः—१प्रातःकालमैं २अज्ञानतैं ५र स्वप्रकाश पूर्ण सनातनपद पुरुषोत्तम नामक । औ ३सर्व मूर्तिरूप ४जिसविषै यह ५संपूर्ण ६जगत ७रज्जुविषै सर्पकी न्याईं भासमान है । [ताकूं] ८मैं अभेदनिश्चयरूप नमस्कार करूं हूं ॥ ३ ॥

॥ अनुष्टुप् छंदः ॥

श्लोकत्रयमिदं पुण्यं लोकत्रयविभूषणम् ॥
प्रातःकाले पठेद्यस्तु स गच्छेत्परमं पदम् ४

अर्थः—१इन पुण्यरूप औ त्रिलोकीके विभूषणरूप २तीनश्लोकनकूं ३जो ४प्रातःकालविषै पठन करै ५सो ६परमपदकूं ७पावै ॥ ४ ॥

॥ इति भाषाटीकासहितं श्रीमच्छंकराचार्यविरचितं प्रातःस्मरणस्तोत्रं समाप्तम् ॥१॥

ॐ

अथ श्रीचर्पटपंजरिकास्तोत्रम् ॥ २ ॥

॥ छंदः ॥

भज गोविंदं भज गोविंदं
भज गोविंदं मूढमते ॥
प्राप्ते सन्निहिते मरणे
नहि नहि रक्षति डुकृञ्करणे ॥ भज० ॥ १ ॥

अर्थः—काहू समयमें जगद्गुरु श्रीमच्छंकराचार्यस्वामीजी ब्राह्मणोंके गृहविषे भिक्षाटन करनेकूं पधारे थे ॥ तहां किसी शास्त्रवासनाके आवेशवाला कोइएक वृद्धब्राह्मण व्याकरणका प्रारंभ करिके "डुकृञ् करणे" शब्दका घोष करता था। तिसकूं देखिके अत्यंतकरुणाविष्ट हुये श्रीशंकर कहते भये:—

१मरणके २समीपमैं ३प्राप्त भये। जातें ४"डु-

कृञ् करणे" ९नहीं रक्षा करै है । नहीं रक्षा करै है यातैं ६हे मूढमते !, ७गोविंदकूं ८भज । ९गोविंदकूं १०भज । ११गोविंदकूं १२भज ॥ १ ॥

बालस्तावत्क्रीडासक्त-
  स्तरुणस्तावत्तरुणीरक्तः ॥
वृद्धस्तावच्चिंतामग्नः
  परे ब्रह्मणि कोऽपि न लग्नः ॥भज०॥२॥

अर्थः–बालक है तहांलगि खेलमैं आसक्त है । युवा है तहांलगि स्त्रीविषै प्रीतिमान् होवै है । औ वृद्ध है तहांलगि चिंतामै मग्न रहै है । परंतु परब्रह्मविषै कोई बी लग्न होता नहीं । तातैं विचक्षण हुया तूं अब गोविंदकूं भज ॥ २ ॥

अंगं गलितं पलितं मुंडं
  दशनविहीनं जातं तुंडम् ॥
वृद्धो याति गृहित्वा दंडं
  तदपि न मुंचत्याशापिंडम् ॥भज०॥३॥

अर्थः—१अंग गलित भया । २शिर ३श्वेतके-शयुक्त भया । ४मुख ५दंतरहित भया । ६वृद्ध हुया ७दंडकूं ८पकरिके ९चलता है । १०तौबी ११आशाके पिंडकूं १२छोडता नहीं । तातैं तूं अब ताके दाहअर्थ गोविंदकूं भज ॥ ३ ॥

पुनरपि जननं पुनरपि मरणं
पुनरपि जननीजठरे शयनम् ॥
इह संसारे खलु दुस्तारे
कृपयाऽपारे पाहि मुरारे ॥ भज० ॥ ४ ॥

अर्थः—१इस २दुस्तर ३अपार ४संसारविषै ५फेर बी जन्म । फेर बी मरण । फेर बी माताके उदरविषै शयन होवै है । तातैं ६"हे मुरारे ! तूं ७कृपा करी ८रक्षण कर" ऐसें प्रार्थना करिके तूं गोविंदकूं भज ॥ ४ ॥

दिनमपि रजनी सायं प्रातः
शिशिरवसन्तौ पुनरायातः ॥
कालः क्रीडति गच्छत्यायु-
स्तदपि न मुंचत्याशावायुः ॥ भज० ॥५॥

अर्थः—१दिनरात्रि सायंप्रात शिशिर अरु वसंत बी फेर आवता है। काल खेलता है। २आयु ३जाता है। ४तौ बी ५आशारूप वायु ६छोडता नहीं। तातैं तूं दृढयत्नकरिके श्री गोविंदकूं भज ॥ ५ ॥

जटिलो मुंडी लुंचितकेशः
काषायांबरबहुधृतवेषः ॥
पश्यन्नपि न च पश्यति लोकै
उदरनिमित्तं बहुकृतशोकः ॥ भज०॥६॥

अर्थः—१जटाधारी। मुंडित। लुंचित केशोंवाला अरु काषायांबरकरि बहुतवेषनके धारनेवाला।

औ २उदरनिमित्त बहुशोकका करनेवाला ३लोक। पाप आदिककूं ४देखता हुया बी नहीं देखता है। तातैं तूं अदृष्टके भरोसे अदंभी हुया गोविंदकूं भज ॥ ६ ॥

वैयसि गते कः कामविकारः
शुष्के नीरे कः कासारः॥
क्षीणे वित्ते कः परिवारो
ज्ञाते तत्त्वे कः संसारः ॥ भज० ॥ ७ ॥

अर्थः—जैसे १वयके गये २कामविकार ३कौन है? ४जलके ५सूके हुये ६ताल ७कौन है? ८धनके ९क्षीण भये १०परिवार ११कौन है? तैसे १२तत्त्वके १३जाने हुये १४संसार १५कौन है? तातैं तूं तत्त्वज्ञानअर्थ गोविंदकूं भज ॥ ७ ॥

अग्रे वह्निः पृष्ठे भानू
रात्रौ चिबुकसमर्पितजानुः॥

करतलभिक्षा तरुतलवास-
स्तदपि न मुंचत्याशापाशः ॥ भज०॥८॥
अर्थः—१आगे अग्नि है। पीछे सूर्य है। रात्रिमें हनुवटीविषे धरे जानुवाला है। करतलमें भिक्षा है। तरुतलमें वास है। तौबी २आशारूप पास ३छोडता नहीं। तातें तूं गोविंदकूं भज ॥८॥

यावद्वित्तोपार्जनसक्त-
स्तावन्निजपरिवारो रक्तः ॥
पश्चाज्जर्जरभूते देहे
वार्तां कोऽपि न पृच्छति गेहे ॥ भज०॥९॥
अर्थः—१जहांलगि धनसंपादनमें समर्थ होवै तहांलगि स्वकुटुंब प्रीतिमान् होवै है। पीछे २देहके ३जीर्ण भये ४गृहविषै ५कोई बी ६वात ७पूछता नहीं। तातें तूं कुटुंबासक्ति छोडिके गोविंदकूं भज ॥ ९ ॥

रथ्याकर्पटविरचितकंथः
 पुण्यापुण्यविवर्जितपंथाः ॥
न त्वं नाहं नायं लोक-
 स्तदपि किमर्थं क्रियते शोकः ॥ भज० १०

अर्थः—१मार्गके जीर्णवस्त्रके खंडोंकरि रची है कंथा जिसनैं । औ पुण्यपापकरि रहित है मार्ग जिसका ।" औ २तूं ३नहीं । ४मैं ५नहीं । ६यह छोक ७नहीं है ।" (ऐसैं जान्या है जिसनैं) ८तौ बी किसअर्थ ९शोक १०करिये है ? तातैं शोकरहित हुया तूं गोविंदकूं भज ॥ १० ॥

नारीस्तनभरजघननिवेशं
 दृष्ट्वा मायामोहावेशम् ॥
एतन्मांसवसादिविकारं
 मनसि विचारय वारंवारम् ॥ भज० ११

अर्थः—१माया औ मोहके आवेशवाले २ना-

रीके स्तनोंके भार अरु जघनरूप स्थानकूं देखि-
के ३इसकूं मांस.अरु नाडीआदिकका विकार
मनविषै ४वारंवार ५विचार कर। अरु गोविंदकूं
भज ॥ ११ ॥

गेयं[2] गीतानामसहस्रं
ध्येयं श्रीपतिरूपमजस्रम् ॥
नेयं[6] सज्जननिकटे चित्तं
देयं[10] दीनजनाय च वित्तम्॥ भज०॥१२॥

अर्थः—१गीता अरु नामोंका सहस्र २गावनै
योग्य है। ३श्रीपतिका रूप निरंतर ४ध्यावनै
योग्य है। ५सज्जनोंके समीपमैं चित्त ६देनेकूं
योग्य है। ७औ ८दीनजनके वास्ते ९वित्त १०देनै
योग्य है। ऐसैं करते हुये तूं गोविंदकूं भज ॥१२॥

भगवद्गीता किंचिदधीता
गंगाजललवकणिका पीता ॥

येनार्कारि मुरारेरर्चा

तस्य यमः किं कुरुते चर्चाम् ॥ भज० ॥ १३

अर्थः–१जिसने २भगवद्गीता कछुक पढी है औ गंगाजलकी लवकनिका पान करी है औ ३मुरारिकी पूजा ४करी है । ५ताकी ६चर्चाकूं ७यमराजा क्या करता है? किंतु नहीं करता है। यातैं ऐसा हुया तूं गोविंदकूं भज ॥ १३ ॥

कोऽहं कस्त्वं कुत आयातः

का मे जननी को मे तातः ॥

इति परिभावय सर्वमसारं

सर्वं त्यक्त्वा स्वप्नविचारम् ॥ भज० १४

अर्थः–१मैं २कौन हूं? ३तूं ४कौन है? ५कहांतैं आया है? ६मेरी जननी ७कौन है? ८मेरा तात९कौन है? १०ऐसें ११स्वप्नतुल्य विचार-

वाला हुया १२सर्वकूं असार १३भावना कर। औ १४सर्वकूं त्यागिके गोविंदकूं भज ॥ १४ ॥

का[1] ते[2] कांता[3] कस्ते[4] पुत्रः
संसारोऽयमतीव विचित्रः ॥
कस्य त्वं कः कुत आयात-
स्तत्त्वं चिंतय मनसि भ्रातः ॥ भज० १५

अर्थः--१तेरी कांता २कौन है? ३तेरा पुत्र ४कौन है? ५यह ६संसार ७अतिशयहीं विचित्र है ॥ ८तूं ९कौनका है? १०कौन है? कहांतें आया है? ११हे भाई!, १२तत्त्वकूं १३मनविषे १४चिंतन कर। अरु गोविंदकूं भज ॥१५॥

सुरतटिनीतरुमूलनिवासः
शय्या भूतलमजिनं वासः ॥
सर्वपरिग्रहभोगत्यागः
कस्य सुखं न करोति विरागः ॥

भज गोविंदं भज गोविंदं
भज गोविंदं मूढमते ॥ १६ ॥

अर्थः—१गंगाके तीरके तरुके मूलमें निवास है। २भूतलरूप ३शय्या है। ४मृगचर्मरूप वस्त्र है। अरु सर्व परिग्रह औ भोगका त्याग है जिसविषै। ऐसा जो ५विराग। सो ६किसकूं सुख नहीं करै है? किंतु सर्वकूं करै है। यातैं तूं विरक्त हुया। ७हे मूढमते! ८गोविंदकूं ९भज। १०गोविंदकूं ११भज। १२गोविंदकूं १३भज ॥१६॥

॥ इति भाषाटीकासहितं श्रीमच्छंकराचार्यविरचितं चरपटपंजरिकास्तोत्रं समाप्तम् ॥ २ ॥

अथ श्रीमुक्तिपंचकम् ॥ ३ ॥

॥ शिखरिणी छंदः ॥

विहायैनः कृत्वा
क्रतुविधुरकर्मादि विहितं
धियं संशोध्याऽऽस्वा-
चिदचिदवलोकादिनिकरम् ॥
समाराध्याऽऽचार्यं
नतिविमतिशुश्रूषणमुखैः
प्रपन्नः सन् पृच्छेद्
विविदिषितमात्मीयमखिलम् ॥१॥

अर्थः—१विहित (शुभ) अरु २फलके संकल्पसैं रहित कर्म अरु उपासनाकूं ३करीके। ४पाप (मलविक्षेप) कूं ५त्यागीके। ६बुद्धिकूं शोधनकरिके ७चिद् जडके विवेकआदिक साधनोंका समूह ८प्राप्तकरिके ॥ फेर ९नमस्कार

प्रश्न अरु सेवाआदिक उपायोंकरि १०आचार्य (गुरु)कूं ११सम्यक् आराधन (प्रसन्न) करिके १२शरणागत हुया १३आपके १४जाननेकूं वांछित १५सकल अर्थकूं [अधिकारी] १६पूछे ॥ १ ॥

विचार्याऽऽस्मानं स्वं
श्रुतिगदितसच्चित्सुखमयं
परं ब्रह्मास्मीति
श्रवणमननध्यानकरणैः ॥
अहं ब्रह्मास्मीति
दृढमुवगतिं गम्य परमां
विबाध्येदं दृश्यं -
सकलमलमज्ञानसहितम् ॥ २ ॥

अर्थः—१गुरुके पास श्रुतिप्रतिपादित सच्चिदानंदस्वरूप २अपने ३आत्माकूं ४"मैं परब्रह्म हूं" ऐसें ५विचारिके । फेर ६श्रवण मनन अरु

निदिध्यासनरूप साधनोकरि "मैं ब्रह्म हूं" ऐसी ७सर्वोत्तम ८विद्याकूं ९दृढ जैसें होवै तैसें १०पायके । ११अज्ञान सहित १२इस १३सकल १४दृश्यकूं १५अत्यंत १६बाधकरिके [स्थित होवै] ॥ २ ॥

विदित्वेत्थं तत्त्वं
निखिलनिगमांतैर्निगदितं
निहत्वाऽनर्थं वै
सकलमपि जीवोत्तुसहितम् ॥
परानंदो भूत्वा
भवति भुवि भव्यो भपतिभो
विधेयं कर्तव्यं
विविधिमपि हेयं हृदि गतम् ३



अर्थः—१ऐसें २सकलवेदांतोंकरि प्रतिपादित ३तत्त्वकूं ४जानिके । ५कारणसहित ६सकल

वी ७अनर्थकूं ८अपरोक्षबाध करिके। ९परमानंदरूप होयके १०भूमिविषै श्रेष्ठचंद्रमा जैसी कांतिवाला (शांत) ११होवै है ॥ ऐसें हुये १२विधान करने योग्य १३हृदयगत १४विविध प्रकारका बी १५कर्तव्य १६त्यागनेकूं योग्य होवै है ॥ ३ ॥

मुदो जीवन्मुक्ते-
 र्यदि हृदि मनीषा स्वविदुष-
स्तदाऽऽवृत्तिं वृत्ते-
 र्निरोधैरभिकुर्वन् यदुत्तिधम् ॥
विनाश्यैव स्थौल्यं
 मलिनतरसत्त्वस्य मनसः
सुसत्त्वाविर्भावात्
 परमसुखसिद्धौ हि सुरमेव ॥ ४ ॥

अर्थः—१फेर जो२स्वस्वरूपके वेत्ता (ज्ञानी)

कूं जो २हृदयविषै ४जीवन्मुक्तिके ५विलक्षण-आनंदकी ६इच्छा होवै ७तौ। ८निरंतर अरु ९दीर्घकाल १०ब्रह्माकारवृत्तिकी ११आवृत्तिकूं १२करता हुया १३अत्यंत मलिन (रजतमसैं तिरस्कृत) है सत्वगुण जिसका । ऐसैं मनके १४स्थूलभाव (रजतमकरि सत्वगुणके तिरस्कार) कूं [ब्रह्माभ्यासके बलसैं रजतमके तिरस्कारद्वारा] १५विनाश करिके (ऐसैं मनोनाशकूं करिके) हीं । १६शुद्धसत्वगुणके आविर्भावतैं निरतिशयसुखके समुद्रविषे निरंतरहीं रमण करै ॥ ४ ॥

१भूमिं प्राप्येमां
परमसुखदां पंचमसुखां
२मुखं मुक्त्वा ३ह्याद्यं
४इतरनिजारब्धमपि ५च ॥

विलाप्येदं विश्वं
जगद्गमयं हेतुसहितं
चिदानंदे शुद्धे
भजति च विदेहामृतमयम् ॥ ५ ॥

अर्थः—१इस (उक्तप्रकारकी) जीवन्मुक्तिके विलक्षणआनंदकी देनेहारी पंचमआदिक २श्रेष्ठभूमिका (चित्तकी अवस्थाविशेष)कूं पायके ३ब्रह्मके ४सुखकूं ५औ ६दृढतर (प्रयत्नसैं अमेट) स्वप्रारब्धकूं बी ७भोगिके । ८हेतु (अज्ञानकी विक्षेपहेतुशक्ति) करि सहित ९इस (दृश्यमान) १०चराचररूप ११विश्वकूं १२शुद्ध १३चिदानंद ब्रह्मविषै १४विलय (नाश) करिके १५यह ज्ञानी १६विदेहमोक्षकूं १७बी १८पावता है ॥५॥

॥ इति श्रीमत् बापुपूज्यपादशिष्य पीतांबराह्वविदुषा विरचितं सटीकं मुक्तिपंचकं समाप्तम् ॥ ३ ॥

अथ श्रीविज्ञाननौका ॥ ४ ॥

॥ भुजंगप्रयातं छंदः ॥

तैपोयज्ञदानादिभिः शुद्धबुद्धि-
र्विरक्तो नृपादौ पदे तुच्छबुद्ध्या ॥
पॅरित्यज्य सॅर्वं यॅदाप्नोति तैत्त्वं
पॅरं ब्रह्म निॅत्यं तॅदेवाहॅमॅस्मि ॥ १ ॥

अर्थः—१तप यज्ञ अरु दानादिककरि शुद्धबुद्धिवाला औ २राज्यआदिकपदविषै तुच्छबुद्धिकरिके ३विरक्त भया पुरुष । ४सर्वकूं ५परित्यागकरिके ६जिस ७तत्त्वकूं ८पावता है । ९सोई १०नित्य ११परब्रह्म १२मैं हूं ॥ १ ॥

दॅयालुं गॅुरुं ब्रॅह्मनिष्ठं प्रशांतं
सॅमाराध्य भॅक्त्या विचॅार्य स्वॅरूपम् ॥

येदाप्नोति तत्त्वं निदिध्यास्य विद्वान्
पॅरं ब्रह्म नित्यं तेदेवाहमस्मि ॥ २ ॥

अर्थः-१दयालु २ब्रह्मनिष्ठ अरु परमशांत ३गुरुकूं ४भक्तिसें ५सम्यक् आराधनकरिके। ६स्वरूपकूं ७विचारिके (श्रवणमननकरिके)। फेर ८निदिध्यासनकरिके विद्वान् हुया। ९जिस १०तत्त्वकूं ११पावता है। १२सोई १३नित्य १४परब्रह्म १५मैं हूं ॥ २ ॥

येदानंदरूपं प्रकाशस्वरूपं
निरस्तप्रपंचं परिच्छेदशून्यम् ॥
अहं ब्रह्मवृत्त्यैकगम्यं तुरीयं
पॅरं ब्रह्म नित्यं तेदेवाहमस्मि ॥ ३ ॥

अर्थः-१जो आनंदरूप प्रकाशस्वरूप निष्प्रपंच तीनपरिच्छेदतें रहित। "मैं ब्रह्म हूं"। इस

एकवृत्तिकरि गम्य अरु तुरीयरूप है। २सोई ३नित्य ४परब्रह्म ५मैं हूं ॥ ३ ॥

यैदज्ञानतो भाति विश्वं समैस्तं
विनष्टं चैं सैद्यो यैदात्मप्रबोधे ॥
मैनोवागतीतं विशुद्धं विमुक्तं
पैरं ब्रह्म नित्यं तैदेवाहमस्मि ॥ ४ ॥

अर्थः—१समस्त २विश्व ३जाके अज्ञानतैं भासता है। ४औ ५जाके स्वरूपके प्रबोध हुये ६सद्यः ७विनाशकूं प्राप्त होवै है । ऐसा जो- ८मनवाणीका अविषय विशुद्ध औ विमुक्त है। ९सोई १०नित्य ११परब्रह्म १२मैं हूं ॥ ४ ॥

निषेधे कृते नेतिनेतीति वाक्यैः
सैमाधिस्थितानां यैदाभाति पूर्णम् ॥
अवस्थात्रयातीतमद्वैतमेकं
पैरं ब्रह्म नित्यं तैदेवाहमस्मि ॥ ५ ॥

अर्थः—१"नेतिनेति (कारण नहीं औ कार्य नहीं)" ऐसैं वाक्यनकरि २निषेधके कियेहुये। ३समाधिविषै स्थित पुरुषनकूं ४पूर्ण तीनअवस्थातैं रहित अद्वैत औ एकरूप ५जो भासता है। ६सोई ७नित्य ८परब्रह्म ९मैं हूं ॥ ५ ॥

यदानंदलेशैः समानंदि विश्वं
यदाभाति सत्वे तदाभाति सर्वम् ॥
यदालोचने हेयमन्यत्समस्तं
परं ब्रह्म नित्यं तदेवाहमस्मि ॥ ६ ॥

अर्थः—१जाके आनंदके लेशों (प्रतिबिंबों)-करि २विश्व ३सम्यक् आनंदवान् होवै है। औ ४जिसके आभाति (प्रभा)के सद्भावके हुये सो ५सर्व ६भासता है। औ ७जाके आलोचनके हुये ८अन्य समस्त ९त्याज्य होवै है। १०सोई ११नित्य १२परब्रह्म १३मैं हूं ॥ ६ ॥

अनंतं विभुं सर्वयोनिं निरीहं
शिवं संगहीनं यदोंकारगम्यम् ॥
निराकारमत्युज्ज्वलं मृत्युहीनं
परं ब्रह्म नित्यं तदेवाहमस्मि ॥ ७ ॥

अर्थः–१जो २अनंत। विभु (व्यापक)। सर्वयोनि (सर्वका कारण)। निरीह (निष्क्रिय)। शिव (कल्याणरूप)। असंग। ३ओंकारकरि गम्य। निराकार। अतिउज्ज्वल औ मृत्युरहित है। ४सोई ५नित्य ६परब्रह्म ७मैं हूं ॥ ७ ॥

यदानंदसिंधौ निमग्नः पुमान्स्या-
दविद्याविलासः समस्तप्रपंचः ॥
तदा नं स्फुरत्यद्भुतं यन्निमित्तं
परं ब्रह्म नित्यं तदेवाहमस्मि ॥ ८ ॥

अर्थः–१जब २पुरुष ३आनंदसमुद्रविषै निमग्न ४होवै है। ५तब ६अविद्याका कार्य सम-

स्तप्रपंच ७स्फुरता नहीं । किंतु अद्भुतरूप जो आनंदका निमित्त स्फुरता है । ८सोई ९नित्य १०परब्रह्म ११मै हूं ॥ ८ ॥

स्वरूपानुसंधानरूपां स्तुतिं यः
पठेदादराद्भक्तिभावो मनुष्यः ॥
शृणोतीह वा नित्यमुद्युक्तचित्तो
भवेद्विष्णुरत्रैव वेदप्रमाणात् ॥ ९ ॥

अर्थः–१जो २मनुष्य ३भक्तिभाववाला हुया ४स्वरूपके अनुसंधानरूप इस स्तुतिकूं ५आदरतें ६पठन करै । ७वा ८ईहां ९नित्य उद्योगवान् चित्तवाला हुया १०सुनताहै । सो ११इहांहीं जीवत अवस्थाविषै वेदरूप प्रमाणतें १२विष्णुरूप १३होवैगा ॥ ९ ॥

॥ इति श्रीभाषाटीकासहिता श्रीमच्छंकराचार्यविरचिता विज्ञाननौका समाप्ता ॥ ४ ॥

॥ श्रीवेदांतपुस्तकालय ॥

शरीफ सालेमहंमदकी कंपनी—कराची.

दाउद शरीफ—श्रीभावनगर.

ॐ

॥ श्रीवेदांतविनोद ॥

चतुर्थअंक ॥ ४ ॥

॥ श्रीवेदांतस्तोत्रसंग्रह ॥ २ ॥

ब्रह्मनिष्ठपंडित श्रीपितांबरजीकृत

भाषादीपिकासहित

सर्वमुमुक्षुके हितार्थ

शरीफ सालेमहंमदने

छपाई प्रकट किया ॥

श्रीमुंबईमें निर्णयसागरप्रेसमें छपा ॥

॥ संवत् १९४४–सन् १८८८ ।

॥ प्रस्तावना ॥

मंगल ॥ दोहा ॥

श्रीगुरुके पद वंदिके यह वेदांतविनोद ॥
प्रकट करों इस करि सबे सज्जन पावहु मोद १

बहुत मुमुक्षुजन श्रीमच्छंकराचार्यकृत औ अन्यमहात्माकृत संस्कृतस्तोत्रनकूं पाठ किंवा कंठ करते हैं। परंतु निष्ठाकी आरूढतामें उपयोगी तिन स्तोत्रनके अर्थ निश्चय करनेमें पराधीनताकूं अनुभव करते हैं। तातें परमकारुणिक ब्रह्मनिष्ठपंडित श्रीपीतांबरजीनें दयाकरिके स्तोत्रनकी भाषा करी है। औ संस्कृतमें अल्पअभ्यासवानकूं भी प्रत्येकशब्दके अर्थका बोध होवे। तातें मूलमें औ भाषामें अन्वयअनुसार अंकोंकूं रखे हैं॥

श्रीवेदांतविनोदके इस चतुर्थअंकमें जितने स्तोत्र छपे हैं। सो नीचे लिखे हैं —

श्रीआत्मषट्कस्तोत्रम् ॥ ५ ॥
श्रीआत्मचिंतनम् ॥ ६ ॥
श्रीनिर्वाणदशकम् ॥ ७ ॥,
श्रीआत्मपंचकम् ॥ ८ ॥

औ अन्य स्तोत्र भी पंचमादिअंकोंविषे छपे हैं ॥

शरीफ सालेमहंमद.

॥ ॐ गुरुपरमात्मने नमः ॥

॥ श्री वेदांतविनोद ॥

चतुर्थअंक ॥ ४ ॥

॥ श्रीवेदांतस्तोत्रसंग्रहप्रारंभः ॥ २ ॥

॥ अथ श्रीआत्मषट्कस्तोत्रम् ॥६॥

॥ भुजंगप्रयातं छंदः ॥

मनोबुद्ध्यहंकारचित्तानि नाहं
न च श्रोत्रजिव्हे न च घ्राणनेत्रे ॥
न च व्योमभूमी न तेजो न वायु-
श्चिदानंदरूपः शिवोऽहं शिवोऽहम् ॥१॥

अर्थः—१मैं २मन बुद्धि अहंकार अरु चित्त नहीं हूं। ३औ श्रोत्र औ जिव्हा ४नहीं हूं। ५अरु घ्राण अरु नेत्र ६नहीं हूं। ७औ आकाश अरु भूमि

८नहीं हूं। अरु ९तेज १०नहीं हूं। अरु ११वायु १२नहीं हूं। किंतु १३चिदानंदरूप शिव मैं हूं। शिव मैं हूं ॥ १ ॥

अहं प्राणवर्गो न पंचानिला मे
न तोधं न मे धातवो नैव कोशाः ॥
न वाक्पाणिपादौ न चोपस्थपायू
चिदानंदरूपः शिवोऽहं शिवोऽहम् ॥२॥

अर्थः-१मैं २जल अरु ३प्राणवर्ग नहीं हूं। ४मेरे ५पांच वायु ६नहीं हैं। ७मेरे धातु ८नहीं हैं। औ ९कोश १०नहीं हैं। औ ११वाक् पाणि अरु पाद १२नहीं हैं। १३औ उपस्थ अरु पायु १४नहीं हैं। किंतु १५चिदानंदरूप शिव मैं हूं। शिव मैं हूं ॥ २ ॥

न मे द्वेषरागौ न मे लोभमोहौ
मदो नैव मे नैव मात्सर्यभानम् ॥

नं धर्मो नं चार्थो नं कामो नं मोक्षः
श्चिदानंदरूपः शिवोऽहं शिवोऽहम् ॥३॥

अर्थः—१मेरेकूं द्वेष अरु राग २नहीं हैं। अरु ३मेरेकूं लोभ अरु मोह ४नहीं हैं। औ ५मेरेकूं ६ मद नहीं है। औ ७मत्सरभावका मान ८नहीं है। ९धर्म १०नहीं है। ११औ अर्थ १२नहीं है। १३ काम १४ नहीं है। १५मोक्ष १६नहीं है। किंतु १७चिदानंदरूप शिव मैं हूं। शिव मैं हूं॥ ३ ॥

नं पुण्यं नं पापं नं सौख्यं नं दुःखं
नं मंत्रो नं तीर्थं नं वेदों नं यज्ञाः ॥
अहं भोजनं नैव भोज्यं नं भोक्ता
चिदानंदरूपः शिवोऽहं शिवोऽहम् ॥४॥

अर्थः—१पुन्य २नहीं है। ३पाप ४नहीं है। ५ सुख ६नहीं है। ७दुःख ८नहीं है। ९मंत्र १०नहीं है। ११तीर्थ १२नहीं है। १३वेद १४नहीं हैं। १५

यज्ञ १६नहीं हैं। औ १७ मैं भोजन (भोग) नहीं हूं। भोज्य अरु १८भोक्ता १९नहीं हूं। किंतु २०चिदानंदरूप शिव मैं हूं। शिव मैं हूं ॥४॥

नै मे¹ मृत्युशंका नै मे³ जातिभेदः-
पिता नैव मे⁶ नैव माता नै जन्म ॥
नै बंधुर्न मित्रं गुरुर्नैव शिष्य-
श्चिदानंदरूपः शिवोऽहं शिवोऽहम् ॥५॥

अर्थः—१मेरेकूं मृत्युकी शंका २नहीं है। औ ३मेरेकूं जातिका भेद ४नहीं है। औ ५मेरेकूं ६ पिता नहीं है।७माता ८नहीं है। ९जन्म १०नहीं है। ११बंधु १२नहीं है। १३मित्र १४नहीं है। १५गुरु अरु १६शिष्य १७नहीं। किंतु १८ चिदानंदरूप शिव मैं हूं। शिव मैं हूं ॥ ५ ॥

अहं निर्विकल्पो निराकाररूपो
विभुर्व्याप्य सर्वत्र सर्वेंद्रियाणि ॥

सदा मे॰ समत्वं न मुक्तिर्न बंधं-
चिदानंदरूपः शिवोऽहं शिवोऽहम् ॥६॥

अर्थः—१मैं निर्विकल्प निराकाररूप विभु हूं। औ २सर्वठिकाने सर्वइंद्रियनके प्रति ३व्यापिके वर्तमान हूं। ४मेरेकूं ५सदा ६समता है। ७मुक्ति ८नहीं है। ९बंध १०नहीं है। किंतु ११चिदानंदरूप शिव मैं हूं। शिव मैं हूं॥ ६॥

॥ इति भाषाटीकासहितं श्रीमच्छंकराचार्यविरचितं आत्मषट्कस्तोत्रं समाप्तम् ॥ ५ ॥



॥ अथ श्रीआत्मचिंतनम् ॥ ६ ॥

॥ अहं ब्रह्मास्मीत्यनुभवं वदति शिष्यः ॥
॥ अनुष्टुप् छंदः ॥

अहमेव परं ब्रह्म वासुदेवाख्यमव्ययम् ।
इति स्यान्निश्चयान्मुक्तो बद्ध एवान्यथा भवेत् १

अर्थः—" मैं ब्रह्म हूं " इस अनुभवकूं शिष्य कहता हैः—१" वासुदेव नामवाला अव्यय (घटने वधनेसें रहित) २परब्रह्म ३मैंहीं हूं "। ४इस ५निश्चयतें मुक्त ६होवैगा ७अन्यथा ८बद्धहीं ९होवैगा ॥ १ ॥

अहमेव परं ब्रह्म न चाहं ब्रह्मणः पृथक् ।
इत्येवं समुपासीत ब्राह्मणो ब्रह्मणि स्थितः २

अर्थः—१" मैंहीं परब्रह्म हूं २औ मैं ब्रह्मतें पृथक् ३नहीं हूं " । ४इसप्रकारसें ५ब्राह्मण (ब्रह्म होनेकी इच्छावाला मुमुक्षु) जो है सो

ब्रह्मविषै स्थित हुया ६सम्यक्उपासना करै ॥२॥
अहमेव परं ब्रह्म निश्चितं चित्त चिंत्यताम् ।
चिद्रूपत्वादसंगत्वादबाध्यत्वात्प्रयत्नतः ॥३॥

अर्थः–१हे चित्त! २चिद्रूप होनेतैं औ असंग होनेतैं औ ३प्रयत्नकरि ४अबाध्य होनेतैं ५"मैंहीं परब्रह्म निश्चित हूं" ऐसे तुज करि ६चिंतन करनेकूं योग्य है ॥ ३ ॥

सर्वोपाधिविनिर्मुक्तं चैतन्यं च निरंतरम् ।
तद्ब्रह्माहमिति ज्ञात्वा कथं वर्णाश्रमी भवेत् ४

अर्थः–१सर्वउपाधिनतैं रहित चैतन्य औ निरंतर (भेदरहित) तिस ब्रह्मकूं "मैं हूं" ऐसें जानिके २वर्णाश्रमी ३कैसैं ४होवै? किसीप्रकारसैं बी होवै नहीं ॥ ४ ॥

अहं ब्रह्मास्मि यो वेद स सर्वं भवति त्विदम् ।
नाभूत्या ईशते देवास्तस्यात्मैषां भवेद्धि सः ५

अर्थः—१जो २"मैं ब्रह्म हूं" ऐसे ३ जानता है। सो ४तौ यह ५सर्व (सर्वात्मा) होवै है। ६ताको ७अभूतिके अर्थ ८देव ९ नहीं १०समर्थ होवै हैं। जातैं ११सो (ज्ञानी) १२इन (देवन)का १३आत्मा १४होवै है॥५॥

अन्योसावहमन्योस्मीत्युपास्ते योऽन्यदेवताम्
न स वेदे नरो ब्रह्म स देवानां यथा पशुः ६

अर्थः—१"यह २अन्य है । ३मैं अन्य हूं" ऐसे ४जो अन्य (आपतैं भिन्न) देवताकूं ५उपासता है । ६सो ७नर ब्रह्मकूं ८नहीं ९जानता है । १०सो ११जैसे (मनुष्यनका) पशु होवै तैसे १२देवनका (पशु) है ॥ ६ ॥

अहं देवो न चान्योऽस्मि ब्रह्मैवाहं न शोकभाक्
सच्चिदानंदरूपोऽहं निर्विकल्पस्वभाववान् ७

अर्थः—१मैं देव हूं। २अन्य ३नहीं हूं।

४ब्रह्मही मैं हूं । ५शोकका भजनेवाला ६ नहीं हूं। किंतु ७सच्चिदानंदरूप ८निर्विकल्पस्वभाववाला ९मैं हूं ॥ ७ ॥

आत्मानं सततं ब्रह्म संभाव्य विहरंति ये[1] । न तेषां दुष्कृतं किंचिद्दुष्कृतोत्था न चापदः॥८

अर्थः–१जे पुरुष २आत्माकूं निरंतर ब्रह्मरूप निश्चय करिके विचरते हैं। ३तिनकूं ४किंचित् ५दुष्कृत (पाप) ६नहीं होवै है । ७औ ८दुष्कृततैं उत्पन्न ९आपत्तियां १०नहीं होवै हैं ८

आत्मानं सततं ब्रह्म संभाव्य विहरेत्सुखम् ॥ संसारे गतसारे यस्तस्य दुःखं न जायते ॥९॥

अर्थः–१जो पुरुष २आत्माकूं निरंतर ब्रह्मरूप निश्चयकरिके ३सुख जैसैं होवै तैसैं ४ विचरै। ५ताकूं ६असार ७संसारविषे ८दुःख नहीं होवै है ॥ ९ ॥

क्षणं ब्रह्माहमस्मीति यः कुर्यादात्मचिंतनम् ।
स महापातकं हन्यात्तमः सूर्योदयो यथा॥ १०

अर्थः–१जो २क्षणमात्र "मैं ब्रह्म हूं" ऐसैं ३आत्माके चिंतनकूं ४करै । ५सो ६सूर्यका उदय जैसै ७अंधकारकूं (हनन करै है) तैसैं ८महापातककूं हनन करै है ॥ १० ॥

अज्ञानाद्ब्रह्मणो जातमाकाशं बुद्बुदोपमम् ।
आकाशाद्वायुरुत्पन्नो वायोस्तेजस्ततः पयः ।
अंभसः पृथिवी जाता ततो व्रीहियवादिकम्॥११

अर्थः–१ब्रह्मके २अज्ञानतैं ३बुद्बुदकी उपमावाला ४आकाश ५उपज्या । ६आकाशतैं वायु उपज्या । वायुतैं तेज । तिसतैं जल । जलसैं पृथ्वी उपजी । तिसतैं व्रीहियवादि (अन्न) उपज्या॥११॥

पृथिव्यप्सु पयो वन्हौ वन्हिर्वायौ नभस्यसौ ।
नभोऽप्यव्याकृते तच्च शुद्धे शुद्धोऽस्म्यहं हरिः

अर्थः–१पृथ्वी जलविषे । जल अग्नि-विषै । अग्नि वायुविषै । २यह (वायु) ३ आकाशविषै । ४आकाश बी अव्याकृत (अज्ञान) विषै । औ सो (अज्ञान) शुद्धविषै कल्पित है । "सो शुद्ध ५हरि ६मैं ७हूं" ॥१२॥

अहं विष्णुरहं विष्णुरहं विष्णुरहं हरिः ।
कर्तृभोक्त्रादिकं सर्वं तदविद्योत्थमेव च १३

अर्थः–१मैं विष्णु हूं । मैं विष्णु हूं । मैं विष्णु हूं । मैं हरि हूं २औ ३कर्ताभोक्तादिक सर्व तिसकी अविद्यातैं उपजाही है ॥१३॥

अच्युतोऽहमनंतोऽहं गोविंदोऽहमहं हरिः ।
आनंदोऽहमशेषोऽहमजोऽहममृतोऽस्म्यहम् ॥१४॥

अर्थः–१अच्युत मैं हूं । अनंत मैं हूं । गोविंद मैं हूं । २हरि ३मैं हूं । ४आनंदरूप मैं हूं । अशेष मैं हूं । अजन्मा मैं हूं । अमृतरूप ५मैं ६हूं ॥१४॥

नित्योहं निर्विकल्पोहं निराकारोहमव्ययः ।
सच्चिदानंदसंदोहः पररूपोऽस्म्यहं सदा १५

अर्थः—१नित्य मैं हूं। निर्विकल्प मैं हूं। निराकार मैं हूं। अव्यय सत् चित् अरु आनंद-का समूह परब्रह्मरूप २सदा ३मैं ४हूं ॥ १५ ॥

ब्रह्मैवाहं न संसारी मुक्तोऽहमिति भावयेत् ।
अशक्नुवन्भावयितुं वाक्यमेतत्सदाभ्यसेत् १६

अर्थः—१"मैं २ब्रह्मही हूं । ३संसारी ४नहीं । ५मैं ६मुक्त हूं"। ७ऐसैं भावना करै। ८भावना करनेकूं ९अशक्त हुया १०इस ११वाक्यका १२सदा अभ्यास करै ॥ १६ ॥

ध्यानयोगेनकमासाद्ब्रह्महत्यां व्यपोहति ।
षण्मासाभ्यासयोगेन सर्वं पापं व्यपोहति १७

अर्थः—१एक मासतैं २ध्यानयोग करि

३ब्रह्महत्याकूं दूरी करै है । पट्मासके अभ्या-
सयोगकरि सर्वपापकूं दूरी करै है ॥ १७ ॥
संवत्सरकृताभ्यासात्सिद्ध्यष्टकमवाप्नुयात् ।
यावज्जीवं सदाभ्यासाज्जीवन्मुक्तो न संशयः
अर्थः-संवत्सरपर्यंत किये अभ्यासतैं सिद्धिनके
अष्टककूं पावता है। औ जीवतपर्यंत सदा अभ्यासतैं
जीवन्मुक्त होवै है । यामें संशय नहीं है ॥ १८॥
नाहं देहो न चे प्राणो नेंद्रियाणि तथैव च ।
न मनोऽहं न बुद्धिश्च नैव चित्तमहंकृतिः१९
अर्थः-१मैं देह २नहीं हूं । ३औ प्राण
४नहीं हूं ५तैसैं ६इंद्रियां ७नहीं हूं। ८औ ९मैं
१०मन ११नहीं हूं। १२औ १३बुद्धि १४नहीं
हूं। औ १५चित्त अरु अहंकार १६नहीं हूं १९
नाहं पृथ्वी न सलिलं न च वह्निस्तथानिलः ।
न चाकाशो न शब्दश्च न च स्पर्शस्तथा रसः॥

अर्थः–१मैं पृथ्वी २नहीं हूं। ३जल ४नहीं हूं। ५औ अग्नि ६नहीं हूं। ७तैसैं वायु ८औ आकाश ९नहीं हूं। १०औ ११शब्द १२नहीं हू। १३औ स्पर्श तैसै रस नहीं हूं ॥ २० ॥

नोहं गंधो न रूपं च न मायाहं न संसृतिः।
सदा साक्षिस्वरूपत्वाच्छिव एवास्मि केवलम्॥

अर्थः–१मैं गंध २नहीं हूं । ३औ ४रूप ५नहीं हू। ६मैं ७माया ८नहीं हूं। ९संसृति १०नहीं हूं। ११सदा साक्षी स्वरूप होनेतैं १२ केवल १३शिवहीं हूं ॥ २१ ॥

अकर्ताहमभोक्ताहमसंगः परमेश्वरः।
सदा मत्सन्निधानेन चेष्टते सर्वमिंद्रियम्॥२२

अर्थः–१मैं २अकर्त्ता हूं। ३अभोक्ता हूं। मैं ४सदा ५असंग परमेश्वर हूं । ६मेरे संन्निधानतैं ७सर्वइंद्रिय ८चेष्टा करैहैं ॥ २२ ॥

आदिमध्यांतमुक्तोऽहं न बद्धोहं कदाचन ।
स्वभावनिर्मलः शुद्धः स एवाहं न संशयः२३

अर्थः— १मैं २आदि मध्य अरु अंततें ३रहित हूं । ३मैं कदाचित् ४बद्ध ५नहीं हूं । जो ६स्वभावतें निर्मल अरु शुद्ध है । सोई मैं हूं । यामैं ७संशय ८नहीं है ॥ २३ ॥

सर्वज्ञोहमनंतोऽहं सर्वगः सर्वशक्तिमान् ।
आनंदः सत्यबोधोहमिति ब्रह्मानुचिंतनम्२४

अर्थः— " सर्वज्ञ मैं हूं । अनंत मैं हूं । सर्वगत सर्वशक्तिमान् आनंदरूप सत्यबोधरूप मैं हूं " । यह ब्रह्मका अनुचिंतन है ॥ २४ ॥

अयं प्रपंचो मिथ्यैव सत्यं ब्रह्माहमद्वयम् ।
अत्र प्रमाणं वेदांता गुरवोऽनुभवस्तथा २५

अर्थः— १"यह प्रपंच मिथ्याही है । सत्य २अद्वय ३ब्रह्म मैं हूं" । ४यामैं ५वेदांत (उप-

निषद्) ६अरु ७गुरु तैसैं अपना अनुभव प्रमाण है ॥ २५ ॥

मय्येव सकलं जातं मयि सर्वं प्रतिष्ठितम् ।
मयि सर्वं लयं याति तद्ब्रह्माद्वयमस्म्यहम् २६

अर्थः— १मेरेविषैही सकल उपज्या है । मेरेविषै सर्व स्थित है । मेरेविषै सर्व लयकूं पावता है । सो २अद्वय ३ब्रह्म ४मैं ५हूं ॥ २६ ॥

ब्रह्मैवाहं न संसारी न चाहं ब्रह्मणः पृथक् ।
नाहं देहो न मे देहः केवलोऽहं सनातनः

अर्थः— १मैं २ब्रह्मही हूं। ३संसारी (जीव) ४नहीं हूं । ५औ मैं ब्रह्मतैं पृथक् ६नहीं हूं । ७मैं देह ८नहीं हूं।९मेरा देह १०नहीं है। ११केवल १२सनातन १३मैं हूं ॥ २७ ॥

॥ इति भाषाटीकासहितं श्रीमदात्मचिंतनं समाप्तम् ॥ ६ ॥

॥ अथ निर्वाणदशकं (सिद्धांत-बिंदुः) प्रारम्भः ॥ ७ ॥

॥ भुजंगप्रयातं छंदः ॥

न भूमिर्न तोयं न तेजो न वायु-
र्न खं नेंद्रियं वा न तेषां समूहः ॥
अनेकांतिकत्वात्सुषुप्त्येकसिद्ध-
स्तदेकोऽवशिष्टः शिवः केवलोऽहम् ॥ १ ॥

अर्थः— १भूमि २नहीं है। ३जल ४नहीं है। ५तेज ६नहीं है। ७वायु ८नहीं है। ९आकाश १०नहीं है। ११इंद्रिय १२नहीं है। १३वा १४तिनका समूह १५नहीं है। इनकूं १६व्यभिचारी होनेतें। १७तातें १८सुषुप्तिविषै सिद्ध १९एक अवशिष्ट २०केवल २१शिव २२मैं हूं ॥ १ ॥

न वर्णा न वर्णाश्रमाचारधर्मा
न मे धारणाध्यानयोगादयोपि ॥
अनात्माश्रयाहंममाध्यासहानात्
तदेकोऽवशिष्टः शिवः केवलोऽहम् ॥२॥

अर्थः—१मेरेकूं २वर्ण ३नहीं है । औ ४वर्ण औ आश्रमके आचार अरु धर्म ५नहीं है । औ ६धारणा औ ध्यान योग आदि बी ७नहीं है । ८अनात्मारूप आश्रयवाले अहंममअध्यासकी निवृत्तितें ॥ तातें एक अवशिष्ट ९केवल १० शिव ११मैं हूं ॥ २ ॥

न माता पिता वा न देवा न लोका
न वेदा न यज्ञा न तीर्थं ब्रुवंति ॥
सुषुप्तौ निरस्तातिशून्यात्मकत्वात्
तदेकोऽवशिष्टः शिवः केवलोऽहम् ॥३॥

अर्थः—१माता २वा ३पिता ४नहीं है । ५

देव ६नहीं है। ७लोक ८नहीं है। ९वेद १० नहीं है। ११यज्ञ १२नहीं है। १३तीर्थ १४नहीं है। १५कहतेहैं कि सुषुप्तिविषे निरस्त अतिशून्यरूप होनेतें ॥ तातें एक अवशिष्ट १६केवल १७शिवरूप १८मैं हूं ॥ ३ ॥

नै सांख्यं नै शैवं नै तत्पांचरात्रम्
नै जैनं नै मीमांसकादेर्मतं वां ॥
१३विशिष्टानुभूत्या विशुद्धात्मकत्वात्
तदेकोवशिष्टः शिवः केवलोऽहम् ॥ ४ ॥

अर्थः—१सो २सांख्य ३नहीं है। ४शैव ५नहीं है। ६पांचरात्र ७नही है। ८जैन ९नहीं है। १०वा११ मीमांसक आदिकका मत १२ नहीं है। १३श्रेष्ठ अनुभव करि विशुद्धस्वरूप होनेतें ॥ तातें एक अवशिष्ट १४केवल १५शिवरूप, १६मैं हूं ॥ ४ ॥

न चोर्ध्वं न चाधो न चांतर्न बाह्यम्
न मध्यं न तिर्यङ् न पूर्वापरादिक् ॥
वियद्व्यापकत्वादखंडैकरूप-
स्तदेकोऽवशिष्टः शिवः केवलोऽहं ॥ ५ ॥

अर्थः—१उर्ध्व २नहीं है। ३औ अध ४नहीं है। ५औ भीतर ६नहीं है। ७बाह्य ८नहीं है। ९मध्य १०नहीं है। ११टेढा १२नहीं है। १३पूर्व अरु पश्चिम दिशा १४नहीं है। १५आकाशकी न्याईं व्यापक होनेतैं। अखंड एकरूप है। तातैं एक अवशिष्ट १६केवल १७शिवरूप १८मैं हूं ॥५॥

न शुक्लं न कृष्णं न रक्तं न पीतं
न कुब्जं न पीनं न ह्रस्वं न दीर्घम्
अरूपं तथा ज्योतिराकारकत्वात्
तदेकोऽवशिष्टः शिवः केवलोऽहम् ॥६॥

अर्थः—१शुक्ल २नहीं हूं। ३कृष्ण ४नहीं हूं।

५रक्त ६नहीं हूं । ७पीत ८नहीं हूं । ९कुब्ज (कूबडा) १०नहीं हूं । ११पीन १२नहीं हूं । १३हृस्व १४नहीं हूं । १५दीर्घ १६नहीं हूं । १७तथा १८अरूप हूं । १९ज्योति (प्रकाश) रूप आकारवाला होनेतैं ॥ तातैं एक अवशिष्ट २० केवल २१शिवरूप २२मैं हूं ॥ ६ ॥

न शास्ता न शास्त्रं न शिष्यो न शिक्षा ।
न च त्वं न चाहं न चायं प्रपंचः ॥
स्वरूपावबोधो विकल्पासहिष्णु-
स्तदेकोऽवशिष्टः शिवः केवलोऽहम् ॥७॥

अर्थः- १शास्ता २नहीं है । ३शास्त्र ४नहीं है । ५शिष्य ६नहीं है । ७शिक्षा ८नहीं है । ९औ तूं १०नहीं है । ११औ मैं १२नहीं हूं । १३औ यह प्रपंच १४नहीं है । जातैं १५स्वरूप-भूत अववोध विकल्पकूं नहीं सहारनेहारा

हूं । तातैं एक अवशिष्ट १६केवल १७ शिवरूप १८मैं हूं ॥ ७ ॥

नं जाग्रन्नं मे स्वप्नको वा सुषुप्ति-
र्नं विश्वो नं वा तैजसः प्राज्ञको वा ॥
अविद्यात्मकत्वात्त्रयाणां तुरीय-
स्त्वेकोऽवशिष्टः शिवः केवलोऽहम् ॥ ८ ॥

अर्थः— १मेरेकूं २जाग्रत ३नहीं है । ४स्वप्न वा सुषुप्ति ५नहीं है । ६विश्व ७नहीं हूं । ८वा तैजस ९वा १०प्राज्ञ ११नहीं हूं । १२तीनोंकूं १३अविद्यास्वरूप होनेतें । १४तातैं १५ तुरीयरूप १६एक अवशिष्ट १७केवल १८शिवरूप १९मैं हूं ॥ ८ ॥

अपि व्यापकत्वाद्धितत्त्वप्रयोगात्
स्वतःसिद्धभावादनन्याश्रयत्वात् ॥

जगत्तुच्छमेतत्समस्तं तदन्यत्
तदेकोऽवशिष्टः शिवः केवलोऽहम् ॥ ९ ॥

अर्थः— १व्यापक होनेतें । औ प्रसिद्ध तत्त्व शब्दकरि उच्चारणतें । औ स्वतःसिद्ध सत्ता (होनेवाला) होनेतें । औ अन्य आश्रयकरि रहित होनेतें २बी । ३तिसतें अन्य ४यह समस्त ५जगत् तुच्छ है । ६तातें एक अवशिष्ट ७केवल ८शिवरूप ९मैं हूं ॥ ९ ॥

न चैकं तदन्यद्द्वितीयं कुतः स्यात्
न वा केवलत्वं न चाकेवलत्वम् ॥
न शून्यं न चाशून्यमद्वैतकत्वात्
कथं सर्ववेदांतसिद्धं ब्रवीमि ॥ १० ॥

अर्थः— १जब एक २नहीं हैं । ३तब तिसतें अन्य द्वितीय कहांतें होवैगा । ४वा केवलभाव

५नहीं है ।६औ अकेवलभाव ७नहीं है। ८शून्य ९नहीं है। १०औ अशून्य ११नहीं है। १२अद्वैतरूप होनेतें । तब ताकूं १३सर्ववेदांतों करि १४कैसें १५कहों ॥ १० ॥

॥ इति भाषाटीकासहितं श्रीमच्छंकराचार्यविरचितं निर्वाणदशकं (सिद्धांतबिंदुः) समाप्तम् ॥ ७ ॥

॥ अथ आत्मपंचकप्रारम्भः ॥ ८ ॥

॥ शालिनी छंदः ॥

नाहं देहो नेंद्रियाण्यंतरंगम्
नाहंकारः प्राणवर्गो न बुद्धिः ॥
दारापत्यक्षेत्रवित्तादिदूरः
साक्षी नित्यः प्रत्यगात्मा शिवोऽहम् ॥१॥

अर्थः—१मैं देह २नहीं हूं। ३इंद्रियां ४नहीं हूं। ५अंतरंग (मन) औ ६अहंकार अरु प्राणवर्ग ७नहीं हूं। औ ८बुद्धि ९नहीं हूं। किंतु स्त्री पुत्र क्षेत्र धन आदिकतें दूर। साक्षी नित्य प्रत्यगात्मा शिवरूप मैं हूं ॥ १ ॥

रज्ज्वज्ञानाद्भाति रज्जुर्यथाहिः
स्वात्माज्ञानादात्मनो जीवभावः ।

आप्तोक्त्या हि भ्रांतिनाशे स रज्जु-
जीवो नाहं देशिकोक्त्या शिवोहम् ॥२॥

अर्थः—१जैसें २रज्जुके अज्ञानतें ३रज्जु ४सर्परूप ५भासती है। तैसें ६स्वात्माके अज्ञानतें आत्माकूं जीवभाव है। जैसें आप्तवचनकरिही भ्रांतिके नाश हुये सो (सर्प) रज्जु होवै है। तैसैं ७गुरुके वचनकरि ८मैं ९जीव नहीं। किंतु १०मैं ११शिव हूं॥ २ ॥

आभातीदं विश्वमात्मन्यसत्यं
सत्यज्ञानानंदरूपे विमोहात् ॥
निद्रामोहात् स्वप्नवत्तन्न सत्यं
शुद्धः पूर्णो नित्य एकः शिवोहम् ॥३॥

अर्थः— १असत्य २यह विश्व। ३सत्य ज्ञान आनंदरूप ४आत्माविषे ५विमोह (भ्रांति)तें ६भासता है। ७निद्रारूप मोहतें स्वप्नकी न्याई सो

८सत्य ९नहीं है ॥ १०शुद्ध पूर्ण नित्य एक शिव-
रूप मैं हूं ॥ ३ ॥

नाहं जातो न प्रवृद्धो न नष्टो
देहस्योक्ताः प्राकृताः सर्वधर्माः ॥
कर्तृत्वादिश्चिन्मयस्यास्ति नाहं-
कारस्यैव ह्यात्मनो मे शिवोऽहम् ॥ ४ ॥

अर्थः—१मैं जन्मकूं पाया २नहीं हूं। ३वृद्ध
भया ४नहीं हूं। ५नष्ट भया ६नहीं हूं। ७प्राकृत
सर्वधर्म ८देहके कहे हैं। ९कर्त्ताभाव आदि
चिन्मय १०आत्मरूप मेरेकूं ११नहीं १२है।
किंतु १३अहंकारकूंही हैं। १४मैं १५शिवरूप
हूं ॥ ४ ॥

मत्तो नान्यत्किंचिदत्रास्ति विश्वं
सत्यं बाह्यं वस्तुमायोपक्लृप्तम् ॥

आदर्शांतर्भासमानस्य तुल्यं
मय्यद्वैते भाति तस्माच्छिवोऽहम् ॥ ५ ॥

अर्थः—१इहां २कुछ बी ३द्वश्य ४मुजतें ५अन्य ६नहीं ७है । ८आदर्शके भीतर भासमानके तुल्य ९सर्व बाह्य वस्तु १०अद्वैतरूप ११मुजविषै १२माया करि कल्पित १३भासता है। तातें १४मैं १५शिव हूं ॥ ५ ॥

॥ इति भाषाटीकासहितमात्मपंचकं
समाप्तम् ॥ ८ ॥



श्रीईशाद्यष्टोपनिषद् । मूल औ श्रीशंकरभाष्य अनुसार हिंदुस्थानीभै. ४

श्रीबालबोध टीकासहित. ... ... ०॥=

,, उक्तग्रंथ चित्रित कपडेके पूंठेसहित. ... १

श्रीपदार्थमंजूषा (वेदांतपदार्थकोश ॥ आगे६०४थे) ३

श्रीवेदस्तुति । अन्वययुक्त । तथा गुर्जरभाषा ०।-

॥ श्रीवेदांतविनोद ॥

इस नामसैं अनेक लघुग्रंथ प्रकट किये जाते हैं॥ तिनमैं *ऐसे चिह्नवाले प्रथछपे हैं ॥ प्रत्येक ग्रंथकी कीमत ०)-॥ रखी है । औ कोइबी ६ अंकका मात्र रु. ०॥ पडेगा ॥

*१.वेदांतपदावलि (श्रीविचारच. ५ अखाभक्तके पद-
ग्रोदयका सार)
*२ वेदांतपदार्थसंज्ञा.
३सूफीओंके गजल.
४ देवाजी भक्तके पद.
६ प्रास्ताविकश्लोक अर्थ-सहित.
* ७वेदांतस्तोत्रसंग्रह अर्थ-सहित.

इनसें आदिलेके अनेक लघुग्रंथ उपरि लिखे क्रमसैं नहीं परंतु समयसजोग अनुसार प्रकट किये जायेंगे ॥

ॐ

॥ श्रीवेदांतविनोद ॥

पंचमअंक ॥ ५ ॥

॥ श्रीवेदांतस्तोत्रसंग्रह ॥ ३ ॥

ब्रह्मनिष्ठपंडित श्रीपितांबरजीकृत

भाषादीपिका सहित

सर्वमुमुक्षुके हितार्थ

शरीफ सालेमहंमदने

छपाई प्रकट किया ॥

श्रीमुंबईमें निर्णयसागरप्रेसमें छपा ॥

॥ संवत् १९४४—सन् १८८८ ॥

श्रीईशाद्यष्टोपनिषद् । मूल औ श्रीशंकरभाष्य
अनुसार हिंदुस्थानीमें. ४

श्रीबालबोध टीकासहित. ... ... ०॥=

,, उक्तग्रंथ चित्रित कपडेके पूठेसहित. ... १

श्रीपदार्थमंजूषा (वेदांतपदार्थकोश ॥ आगे ६०४ पे) ३

श्रीवेदस्तुति । अन्वययुक्त । तथा गुर्जरभाषा ०।-

॥ श्रीवेदांतविनोद ॥

इस नामसें अनेक लघुग्रंथ प्रकट किये जाते हैं॥ तिनमें * ऐसे चिह्नवाले ग्रंथ छपे हैं ॥ प्रत्येक अंककी कीमत ०)-॥ रखी है । औ कोइबी ६ अंकका मात्र रु. ०॥ पड़ेगा ॥

*१ .वेदांतपदावलि (श्रीविचारचं- द्रोदयका सार)
*२ वेदांतपदार्थसंज्ञा.
३ सूफीओंके गजल.
४ देवाजी भक्तके पद.
५ अखाभक्तके पद-
६ प्रास्ताविकश्लोक अर्थसहित.
* ७वेदांतस्तोत्रसंग्रह अर्थसहित.

इनसें आदिलेके अनेक लघुग्रंथ उपरि लिखे क्रमसें नहीं परंतु समयसंजोग अनुसार प्रकट किये जायेंगे ॥

॥ ॐ गुरुपरमात्मने नमः ॥

॥ श्रीवेदांतविनोद ॥

पंचमअंक ॥ ५ ॥

॥ श्रीवेदांतस्तोत्रसंग्रहप्रारंभः ॥ ३ ॥

॥ अथ श्रीहस्तामलकस्तोत्रम् ॥ १॥

॥ श्रीशंकरउवाच ॥

॥ उपेंद्रवज्रा छंदः ॥

कैस्त्वं शिशो कॅस्य कुतोऽसि गंता ।
किं नाम ते त्वं कुत आगतोऽसि ॥
एतन्मयोक्तं वंद चार्भकंत्वं
मत्प्रीतये प्रीतिविवर्धनोऽसि ॥ १ ॥

अर्थः-श्रीशंकर उवाचः-१हे बालक ! २तूं ३कौन है। ४किसका है। कहांतें ५जानेवाला ६है। ७तेरा ८क्या नाम है। ९तूं कहांतें आया

॥ प्रस्तावना ॥

मंगल ॥ दोहा ॥

श्रीगुरुके पद वंदिके यह वेदांतविनोद ॥
प्रकट करौं इस करि सबै सज्जन पावहु मोद १

बहुत मुमुक्षुजन श्रीमच्छंकराचार्यकृत औ अन्यमहात्माकृत संस्कृतस्तोत्रनकूं पाठ किंवा कंठ करते हैं । परंतु निष्ठाकी आरूढतामैं उपयोगी तिन स्तोत्रनके अर्थ निश्चय करनेमैं पराधीनताकूं अनुभव करते हैं । तातैं परमकारुणिक ब्रह्मनिष्ठपंडित श्रीपीतांबरजीनैं दयाकरिकै स्तोत्रनकी भाषा करी है । औ संस्कृतमैं अल्पअभ्यासवान्कूं बी प्रत्येकशब्दके अर्थका बोध होवै । तातैं मूलमैं औ भाषामैं अन्वयअनुसार अंकोंकूं रखे हैं ॥

श्रीवेदांतविनोदके इस पंचमअंकमैं जितने स्तोत्र छपे हैं । सो नीचे लिखे हैं:—

श्रीहस्तामलकस्तोत्रम् ॥ ९ ॥
श्रीकाशीपंचकस्तोत्रम् ॥ १० ॥
श्रीस्वानुभवादर्शस्तोत्रम् ॥ ११ ॥

औ अन्य स्तोत्र वा ग्रन्थ अंकनिविषै छापे हैं ॥

शरीफ सालेमहंमद.

निमित्तं मनश्चक्षुरादि प्रवृत्तौ ।
निरस्ताखिलोपाधिराकाशकल्पः ॥
रविर्लोकचेष्टानिमित्तं यथा यः ।
स नित्योपलब्धिस्वरूपोऽहमात्मा ॥ ३ ॥

अर्थः—१जैसैं २लोकनकी चेष्टाका निमित्त ३सूर्य है। तैसैं ४जो ५मन अरु चक्षु आदिक-की प्रवृत्तिविषै ६निमित्त है। औ ७निरस्त सर्व उपाधिवाला अरु आकाशके तुल्य है। ८सो नित्य ज्ञानस्वरूप ९आत्मा १०मैं हूं ॥ ३ ॥

यमग्न्युष्णवन्नित्यबोधस्वरूपं ।
मनश्चक्षुरादीन्यबोधात्मकानि ॥
प्रवर्त्तंत आश्रित्य निष्कंपमेकं ।
स नित्योपलब्धिस्वरूपोऽहमात्मा ॥ ४ ॥

अर्थः—१अग्निके उष्णकी न्याईं नित्य बोध-स्वरूप २निश्चल एकरूप ३जिसकों ४आश्रय

हैं। १०हे बाल! तूं ११इस मेरेकरि उक्तअर्थकूं १२औ (अनुक्तअर्थकूं बी) १३मेरी प्रीतिके वास्ते १४कथन कर। १५तूं प्रीतिवर्धक है ॥१॥

॥ हस्तामलकउवाच ॥

॥ भुजंगप्रयातं छंदः ॥

नाहं मनुष्यो न च देवयक्षौ ।
न ब्राह्मणक्षत्रियवैश्यशूद्राः ॥
न ब्रह्मचारी न गृही वनस्थो ।
भिक्षुर्न चाहं निजबोधरूपः ॥ २ ॥

अर्थः—हस्तामलक उवाचः—१मैं मनुष्य २नहीं हूं। ३औ देव अरु यक्ष ४नहीं हूं। औ ५ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य अरु शूद्र ६नहीं हूं। ७ब्रह्मचारी ८नहीं हूं। ९गृहस्थ औ वानप्रस्थ १०नहीं हूं। ११औ १२भिक्षु (सन्यासी) नहीं हूं। किंतु १३निजबोधरूप १४मैं हूं ॥ २ ॥

निमित्तं मनश्चक्षुरादि प्रवृत्तौ ।
निरस्ताखिलोपाधिराकाशकल्पः ॥
रविर्लोकचेष्टानिमित्तं यथा यः ।
स नित्योपलब्धिस्वरूपोऽहमात्मा ॥ ३ ॥

अर्थः—१जैसे २लोकनकी चेष्टाका निमित्त ३सूर्य है। तैसे ४जो ५मन अरु चक्षु आदिक-की प्रवृत्तिविषै ६निमित्त है। औ ७निरस्त सर्व उपाधिवाला अरु आकाशके तुल्य है। ८सो नित्य ज्ञानस्वरूप ९आत्मा १०मैं हूं ॥३॥

यो मन्युष्णवन्नित्यबोधस्वरूपं ।
मनश्चक्षुरादीन्यबोधात्मकानि ॥
प्रवर्त्तत आश्रित्य निष्कंपमेकं ।
स नित्योपलब्धिस्वरूपोऽहमात्मा ॥ ४ ॥

अर्थः—१अग्निके उष्णकी न्याई नित्य बोध-स्वरुप २निश्चल एकरूप ३जिसकों ४आश्रय

करिकै ५अबोध (जड) स्वरूप ६मन अरु चक्षु आदिक ७प्रवर्त्त होवै हैं । ८सो नित्य ज्ञान-स्वरूप ९आत्मा १०मैं हूं ॥ ४ ॥

मनश्चक्षुरादेर्वियुक्तः स्वयं यो ।
मनश्चक्षुरादेर्मनश्चक्षुरादिः ।
मनश्चक्षुरादेरगम्यस्वरूपः ।
स नित्योपलब्धिस्वरूपोऽहमात्मा ॥५॥

अर्थः—१जो २आप ३मन अरु चक्षु आदिकतैं न्यारा है। औ४मन अरु चक्षु आदिकका मन अरु चक्षुरूपादिक है। औ मन अरु चक्षुआदिकतैं अगम्य स्वरूपवाला है। सो नित्य ज्ञानरूप ५आत्मा ६मैं हूं५

मुखाभासको दर्पणे दृश्यमानो ।
मुखत्वात्पृथक्त्वेन नैवास्ति वस्तु ॥
चिदाभासको धीषु जीवोपि तद्वत् ।
स नित्योपलब्धिस्वरूपोऽहमात्मा ॥ ६ ॥

अर्थः—जैसें १दर्पणविषै दृश्यमान जो २मुखका आभास। सो ३मुखरूप होनेतें पृथक्‌पनेकरि ४वस्तु ५नहीं है। ६तैसें ७बुद्धिविषै ८चिदाभासरूप ९जीव बी है। १०सो नित्य ज्ञानस्वरूप ११आत्मा १२मैं हूं ॥ ६ ॥

यथा दर्पणाभाव आभासहानौ ।
मुखं विद्यते कल्पनाहीनमेकम् ॥
तथा धीवियोगे निराभासको यः ।
स नित्योपलब्धिस्वरूपोहमात्मा ॥ ७ ॥

अर्थः—१जैसें दर्पणके अभावके भये मुखके आभासकी हानिकै हुये २कल्पनाहीन एक ३मुख विद्यमान होवै है। ४तैसें बुद्धि उपाधिके वियोग भये ५जो ६आभासरहित होवै है। ७सो नित्यज्ञानस्वरूप ८आत्मा ९मैं हूं ॥ ७ ॥

य एको विभाति स्वतः शुद्धचेताः ।
प्रकाशस्वरूपोऽपि नानेव धीषु ॥

शरावोदकस्थो यथाभानुरेकः
स नित्योपलब्धिस्वरूपोहमात्मा ॥ ८ ॥

अर्थः–१जो एक २स्वतः शुद्धचेतन प्रकाशस्वरूप हुयाभी ३बुद्धिनविषै ४नानाकी न्याई। ५भासता है । ६जैसे ७एक ८भानु ९शरावके जलविषै स्थित हुया [नानाकी न्याई भासता है।] तैसे १०सो नित्य ज्ञानस्वरूप ११आत्मा १२मैं हूं॥८॥

यथा सूर्य एकोप्यनेकश्चलासु ।
स्थिरास्वप्सनन्वग्विभाव्यस्वरूपः ॥
चलासु प्रभिन्नासु धीष्वेक एवं ।
स नित्योपलब्धिस्वरूपोहमात्मा ॥ ९ ॥

अर्थः–१जैसे २एक बी ३सूर्य । ४चंचल अरु स्थिररूप नानाजलविषै अनुगतप्रकाशकरि भासमान स्वरूपवाला हुया ५अनेकरूप होवै है । ६ऐसे ७एक हुया । ८चंचल भिन्न भिन्न बुद्धिनविषै जो अनेकरूप होवै है। ९सो

नित्य ज्ञानस्वरूप १०आत्मा ११मैं हूं ॥ ९ ॥

यथानेकचक्षुः प्रकाशो रविर्न ।
क्रमेण प्रकाशीकरोति प्रकाश्यम् ।
अनेका धियो यस्तथैकप्रबोधः ।
स नित्योपलब्धिस्वरूपोहमात्मा ॥१०॥

अर्थः—१जैसे अनेकचक्षुनका प्रकाशक सूर्य है। सो २प्रकाशने योग्य वस्तुकूं ३क्रमसे ४नहीं ५प्रकाश करै है। ६तैसें ७जो ८एक प्रबोध ९अनेकबुद्धिनकूं प्रकाश करै है । १०सो नित्यज्ञानस्वरूप ११आत्मा १२मैं हूं ॥ १० ॥

विवस्वत्प्रभातं यथा रूपमक्षम् ।
प्रगृह्णाति नाभातमेवं विवस्वान् ॥
यदाभातमाभासयत्यक्षमेकः ।
स नित्योपलब्धिस्वरूपोहमात्मा ॥११॥

अर्थः—१जैसे २सूर्यकरि प्रकाशित ३रूपकूं चक्षु ग्रहण करैहै । ४अप्रकाशितकूं ५नहीं ।

६ऐसें ७एक सूर्य जो है सो ८जिसकरि प्रकाशित ९चक्षुकूं १०प्रकाशता है । ११सो नित्य ज्ञानस्वरूप १२आत्मा १३मैं हूं ॥ ११ ॥

समस्तेषु वस्तुष्वनुस्यूतमेकं ।
समस्तानि वस्तूनि यन्न स्पृशंति ॥
वियद्वत्सदा शुद्धमच्छस्वरूपं ।
स नित्योपलब्धिस्वरूपोहमात्मा ॥ १२ ॥

अर्थः—समस्तवस्तुनविषै अनुस्यूत एक है। औ समस्तवस्तु जिसकूं स्पर्श करते नहीं । औ आकाशकी न्याई शुद्ध स्वच्छ स्वरूपवाला है । सो नित्य ज्ञानस्वरूप आत्मा मैं हूं ॥ १२ ॥

यथाभ्रच्छन्नदृष्टिर्घनच्छन्नमर्कं ।
यथा मन्यते निष्प्रभं चातिमूढः ॥
तथा बद्धवद्भाति यो मूढदृष्टेः
स नित्योपलब्धिस्वरूपोहमात्मा ॥१३॥

अर्थः—१जैसें २बादलकरि आच्छादितदृष्टि-

वाला ३अतिमूढ (बालक) ४मेघकरि आच्छादित सूर्यकूं ५निस्तेज ६मानता है। ७तैसें ८जो मूढदृष्टिवाले पुरुषकूं ९बद्धकी न्याईं भासता है। १०सो नित्य ज्ञानस्वरूप ११आत्मा १२मैं हूं १३

उपाधौ यथा भेदता सन्मणीनां ।
तथा भेदता बुद्धिभेदेषु तेऽपि ॥
यथा चंद्रिकाणां जले चंचलत्वम् ।
तथा ¹²चंचलत्वं तवापीह विष्णो ॥१४॥

अर्थः–(आचार्यवाक्य)१जैसें श्रेष्ठ २मणीनकी ३उपाधिके होते ४भेदता होवैहै। ५तैसें ६तेरी बी ७बुद्धिके भेदोंविषै ८भेदता होवै है। ९जैसें चंद्रमाकी कां तिनकी जलविषै चंचलता है। तैसें १०हे विष्णो (पूर्ण)! ११तेरी बी [इहां बुद्धिविषै] १२चंचलता है१४

॥ इति श्रीभाषाटीकासहितं श्रीहस्तामलकाचार्यकृतं स्तोत्रं समाप्तम् ॥ ९ ॥

॥ अथ श्रीकाशीपंचकस्तोत्रम् ॥१०॥

॥ उपेंद्रवज्रा छंदः ॥

मनोनिवृत्तिः परमोपशांतिः ।
सा तीर्थवर्या मणिकर्णिका च ॥
ज्ञानप्रवाहा विमलादिगंगा ।
सा काशिकाहं निजबोधरूपा ॥ १ ॥

अर्थः—जहां १मनकी निवृत्तिरूप जो परम-उपशांति । सो तीर्थनविषे श्रेष्ठ मणिकर्णिका है । औ ज्ञानरूप प्रवाहवाली विमलआदि गंगा है । सो २निजबोधरूप ३काशी मैं हूं ॥ १ ॥

यस्यामिदं कल्पितमिंद्रजालं ।
चराचरं भाति मनोविलासम् ॥
सच्चित्सुखैका परमात्मरूपा ।
सा काशिकाहं निजबोधरूपा ॥ २ ॥

अर्थः—१जिसविषै यह कल्पित इंद्रजालरूप २मनका विलास ३चराचर भासता है। औ जो ४सच्चिदानंद एक परमात्मारूप है। सो ५निज बोधरूप ६काशी मैं हूं ॥ २ ॥

कोशेषु पंचस्वधिराजमाना ।
बुद्धिर्भवानी प्रतिदेहगेहम् ॥
साक्षी शिवः सर्वगतोंऽतरात्मा ।
सा काशिकाहं निजबोधरूपा ॥ ३ ॥

अर्थः—जो १पंच २कोशोंविषै ३विराजमान है। औ जहां ४देहदेहरूप गृहके प्रति ५बुद्धिरूप भवानी है। औ ६सर्वगत अंतरात्मा ७साक्षीरूप शिव है। ८सो ९निजबोधरूप १०काशी मैं हूं ॥ ३ ॥

॥ अनुष्टुप् छंद. ॥

काश्यां हि काशते काशी ।
काशी सर्वप्रकाशिका
सा काशी विदिता येन
तेन प्राप्ता हि काशिका ॥ ४ ॥

अर्थः-१प्रसिद्ध २काशीविषे ३चेतनरूप काशी ४प्रकाश करै है । औ जो चेतनरूप ५काशी सर्वकी प्रकाशक है । ६जिसनै ७सो काशी जानी है। ८तिसने ९काशी १०प्राप्त करी है ॥ ४ ॥

॥ स्रग्धरा छंदः ॥

काशीक्षेत्रं शरीरं त्रिभुवनजठरे
व्यापिनी ज्ञानगंगा ।
भक्तिः श्रद्धा गयेयं निजगुरुचरण-
ध्यानयोगः प्रयागः ॥

विश्वेशोऽयं तुरीयः सकलजनमनः
साक्षिभूतोऽन्तरात्मा ।
देहे सर्वं मदीये यदि वसति पुन-
स्तीर्थमन्यत्किमस्ति ॥ ५ ॥

अर्थः–१शरीररूप २काशीक्षेत्र है । औ ३त्रिभुवनके जठरविषै व्यापनेवाली ज्ञानरूप गंगा है । औ ४ यह ५भक्ति अरु श्रद्धारूप गया है । औ ६निज गुरुके चरणोंका ध्यानयोग प्रयाग है । औ ७सर्वजनोंके मनका साक्षीभूत अंतर आत्मा ८यह तुरीयरूप ९विश्वेश्वर है ॥ १०जब ११मेरे १२देहविषै सर्व १३वसता है । तब फेर १४अन्य १५तीर्थ १६क्या है ॥ ५ ॥

॥ इति भाषाटीकासहितं श्रीकाशी-
पंचकस्तोत्रं समाप्तम् ॥ १० ॥

॥ अथ श्रीस्वानुभवादर्शस्तोत्रम् ११

प्रथम सर्वअविकारीनकूं साधारण ससाधन सफलज्ञानके उपदेशपूर्वक स्वरूपानुसंधान करते हुये स्वानुभवकूं दिखावै हैं:–

॥ शार्दूलविक्रीडितं छंदः ॥

कर्मोपास्तिविशुद्धशांतहृदयो
नाऽऽप्ता विवेकादिकं ।
गत्वा ब्रह्मविदं प्रशांतममलं
वेदार्थविज्ञं गुरुम् ॥
संशोध्य श्रवणं विधाय च
मुहुर्मत्वा निदिध्यासवान्।
ज्ञात्वा यं परमेति मुक्तिवपुषं
सोऽहं परात्मा स्वयम् ॥ १ ॥

अर्थः–१कर्म अरु उपासना करिके विशुद्ध अरु शांत (एकाग्र) भया है हृदय जिसका । ऐसा

जो मनुष्य। सो २विवेक आदिक [साधन]कूं ३पायके। ४ब्रह्मवेत्ता शांत निर्मल (अनंदित आचारवाले) वेदअर्थके जाननेवाले गुरुके प्रति [विधिपूर्वक] ५शरण जायके। [ताके पास] तत्त्वकूं ६शोधन करिके। ७औ [अंगअंगी भेदतैं द्विविध] ८श्रवणकूं करिके। औ ९वारंवार मनन-करिके निदिध्यासनवान् हुया पुरुष १०जाकूं ११जानिके १२मुक्तिस्वरूप १३परब्रह्मकूं पा-वता है। १४सो १५परमात्मा आप १६मैं हूं ॥११॥

अब उत्तमअधिकारीके अर्थ तत्त्वशोधनके प्रकारपूर्वक बोधके मार्गकूं कहै हैं:—

नेतीत्यादिजगन्निषेधनपरै-
र्वेदांतवाक्यैः परै-
र्युक्त्या च प्रतिषिद्ध्य द्वैतमखिलं
चाव्याकृतं व्याकृतम् ॥

[15]ध्यात्वा[14]काशसुपुष्पसन्निभमि[13]दं
शेषं[16] च[12] तत्त्वं[19] निजं[18] ।
ज्ञात्वा[20] यं[17] परमेति[22] मुक्तिवपुं[21]
सो[23]ऽहं[25] परात्मा[24] स्वयम् ॥ २ ॥

अर्थः- १ "नेति नेति" इत्यादिक जगत्‌के निषेध करनेके परायण २श्रेष्ठ ३उपनिषदनके वाक्यनकरि ४औ ५युक्तिकरि । ६अव्याकृत (कारण)रूप ७औ ८व्याकृत (कार्य)रूप ९संपूर्ण १०द्वैतकूं ११निषेधकरिके (प्रथम परोक्षबाध करिके)।१२औ [तिसविषे एकाग्रताके अर्थ] १३इस (प्रपंच)कूं १४आकाशके पुष्पतुल्य (तुच्छरूप) १५चिंतन करिके। १६शेषरूप १७जिस १८निज १९तत्त्वकूं २०जानिके २१मुक्तिस्वरूप २२परब्रह्मकूं पावता है। २३सो २४परमात्मा आप २५मैं हूं ॥ २ ॥

अब मध्यमअधिकारीके अर्थ तत्त्वशोधनके प्रकारपूर्वक बोधके मार्गकूं कहे हैं —

देहांतर्गतपंचकोशजगतः
कृत्वा पृथग्बुद्धिमान् ।
संगत्या सुविभागहानविधया
तत्त्वंपदार्थौ परौ ॥
सूत्रात्मासीतिपदेन चैक्यमनयोः
संबंधसिद्धं हृदा ।
ज्ञात्वा यं परमेति सुखैकवपुषं
सोऽहं परात्मा स्वयम् ॥ ३ ॥

अर्थः— १बुद्धिमान् पुरुष । २सुष्ठुप्रकारसैं विरोधिभागका त्याग है प्रकार जिसका । ऐसी ३संगति (शब्दकी लक्षणावृत्तिकरि समष्टिव्यष्टि रूप तीन ४देहनके अंतर्गत पंचकोश (अन्नमय प्राणमय मनोमय विज्ञानमय आनंदमय)रूप ज-

गतूतैं ५पर (लक्ष्य)रूप "तत्त्वमसि" इस महावाक्यगत ६"तत्" अरु "त्वं" इन दो पदोंके अर्थनकूं ७पृथक् (भिन्न) ८करिके। ९औ १०"असि" (हो) इस पदकरि ११इन (उक्त दो पदार्थन)के एकताके बोधक तीनसंबंध (दोपदनके सामानाधिकरण्य दो वाच्यार्थनके विशेषण विशेष्यता। दोलक्ष्यनके लक्ष्यलक्षकभाव)करि सिद्ध १२एकताकूं [बोधके सहकारी कारण शुद्ध] १३अंतःकरणकरि १४स्मरणकरिके। १५जिसकूं १६जानिके १७मुक्तिस्वरूप १८परब्रह्मकूं पावता है। १९सो २०परमात्मा आप २१मैं हूं॥ २॥

अब मंद (कुतर्कदूषितबुद्धिवाले) अधिकारीके अर्थ तत्त्वशोधनके प्रकारपूर्वक बोधके मार्गकूं कहे हैं:-

चार्वाकादिपरीक्षकैरभिमता-
नात्मत्वबुद्ध्या जडान् ।
कोशान् पंच विविच्य तुच्छमतिना
संबाध्य युक्त्या सुधीः ॥
क्षेपं पुच्छतया मतं सोऽहमिति
प्रत्यक्स्वरूपं हृदं ।
ज्ञात्वा यं परमेति मुक्तिवपुपं
सोऽहं परात्मा स्वयम् ॥ ४ ॥

अर्थः— १तीव्रबुद्धिवाला पुरुप । २चार्वाक (देहात्मवादी) आदिक परीक्षक (युक्तिकुशल)- नकरि ३अहंभावकी बुद्धिकरि ४अभिमत ५ज- ड ६पंच अन्नमयादि ७कोशनकूं ८युक्तिसे ९ विवेचनकरिके (आत्मातैं भिन्न जानिके)। "ये तुच्छ (असत्) हैं" ऐसी बुद्धिकरि सम्यक् बा- धकरिके (परमार्थसत्ताकरि इनके त्रिकालअ-

भावका निश्चय करिके) । आनंदमयकोशरूप पक्षीके ब्रह्मरूप १०पुच्छ होनेकरि तैत्तिरीय-श्रुतिविषै माने हुये ११प्रत्यक् स्वरूप (प्रत्यगात्मासैं अभिन्न) १२शेषरूप १३जिसकूं १४मैं हूं। ऐसैं १५दृढ (संशय औ विपर्ययसैं रहित) जानिके १६मुक्तिस्वरूप १७परब्रह्मकूं पावताहै। १८सो १९परमात्मा आप २०मैं हूं ॥ ४ ॥

अब जीवन्मुक्तिके विलक्षणआनंदअर्थ वैराग्य बोध अरु उपशमके एकत्रस्थितिके प्रकारकूं कहै हैं—

स्वांतं वासनया मलीमसमथो
पीनं गुणाभ्यां भृशं।
वैराग्येण विवेकजन्मवपुषा
दग्ध्वा हि पूर्वं च ताम् ॥
न्यक्कृत्यानु रजस्तमस्युपरमात्
संपाद्य शुद्धं मृतं।

ज्ञात्वा ¹⁹यं परैमेति मुक्तिवपुं
सोऽहं परात्मा स्वयम् ॥ ९ ॥

अर्थः— १वासनाकरि मलिन औ २रजोगुण अरु तमोगुणकरि अत्यंत ३पीन (स्थूल) भये ४मनकूं ५विवेकतैं जन्मयुक्त स्वरूपवाले ६वैराग्यकरि ७प्रथम ८ता (वासना)कूं ९क्षय (क्षय)करिके १०औ ११जिसकूं १२जानिके १३ अनंतर १४उपशम (ब्रह्माभ्यासजनित चित्त-निरोधरूप समाधिमय राजयोग)तैं १५रजोगुण अरु तमोगुणकूं १६तिरस्कार करिके १७ शुद्ध (निर्वासनिक) अरु मृत (आविर्भूत सत्त्वगुणवाला होनेकरि नष्टस्थूलभाववाला) १८संपादनकरिके [जीवतदशामिषे] १९मुक्तिस्वरूप २०परब्रह्मकूं पावताहै २१सो २२ परमात्मा आप २३मैं हूं ॥ ९ ॥

अब सप्तज्ञानभूमिकाके कथनपूर्वक उक्त स्थितिकी अवधि औ फलकूं दिखावै हैं:—

जाग्रत्कत्रितयं तथैकमपरं
-स्वमं सुपुप्तिद्वयं ।
संपाद्यैव तुरीयगां सुविमले
पूर्णे चे ह्यस्या युते ॥
सांद्रानंदपयोनिधौ सुरमते
ध्यात्वाऽथ जीवन्नपि ।
ज्ञात्वा यं परमेति मुक्तिवपुषं
सोऽहं परात्मा स्वयम् ॥ ६ ॥

अर्थः— १तीनजाग्रत (शुभेच्छा । सुविचारणा । तनुमानसारूप तीनभूमिका)कूं २संपादनकरिकेहीं । ३तैसें ४जिसकूं ५जानिके ६एक अपर (प्रसिद्धस्वमतैं विलक्षण) स्वम (चतुर्थ भूमिका)कूं [संपादनकरिकेहीं तैसें] ७ध्यान

(समाधि)करिके ८ दोसुपुप्ति (पंचम, षष्ठ भूमिका)कूं [तैसें] ९तुरीयगा (सप्तमभूमिका)कूं [संपादन करिकेहीं] १०जीवता हुया बी पुरुष ११ सुविमल (विशुद्ध) १२औ १३पूर्ण औ स्वरूपाकार १४वृत्तिकरि सहित सघनआनंदके समुद्रविषै सुष्ठुप्रकारसैं रमता है। १५अनंतर (देहपातके भये) १६विदेहमुक्तिस्वरूप १७परब्रह्मकूं पावता है। १८सो १९परमात्मा आप २०मैं हूं॥ ६॥

अब उक्तस्थितिके साधनभूत अष्टांगसहित निर्विकल्पसमाधिरूप राजयोगकूं सूचन करते हुये स्वस्वरूपका अनुसंधान करै हैं:—

कृत्वा पंचविधान् यमांश्च नियमान्
सिद्धादिकं चासनं ।
प्राणानां नियमं तथेंद्रियगणं
संयम्य शब्दादितः ॥

[११]ध्यानं [१०]धारणया [१२]समाधियुगलं
संपाद्य धीरात्मवान् ।
[१४]ज्ञात्वा [१३]यं [१६]परमेति [१५]मुक्तिवपुं
[१७]सोऽ[१९]हं [१८]परात्मा स्वयम् ॥ ७ ॥

अर्थः— १पांचप्रकारके यमोंकूं औ नियमोंकूं २औ ३सिद्धआदिक ४आसनकूं औ ५प्राणोंके निरोधकूं ६करिके ७तैसैं इंद्रियनके गणकूं ८शब्द आदिकतैं ९रोधिके। तैसैं १०धारणाकरि ११ध्यानकूं [तैसैं सविकल्प अरु निर्विकल्प भेदतैं] १२दोसमाधिकूं संपादन करिके। धीरचित्तवाला हुया पुरुष १३जिसकूं १४जानिके (साक्षात् करिके) उभय १५मुक्तिस्वरूप १६परब्रह्मकूं पावताहै। १७सो १८परमात्मा आप १९मैं हूं ॥७॥

अब उक्त अष्टांगसहित योगविषै असमर्थ ज्ञानीकूं उक्तफलकी प्राप्तिअर्थ विचाररूप सुगम-उपायकूं कहै हैंः—

मिथ्यात्वं मनसा स्मरंस्त्रिजगतो
देहादिभानं त्यजन् ।
वप्मोपाधिकृतां भिदां विघटयन्
कुर्वन् मनो निर्मलम् ॥
ब्रह्मास्मीति विभावयन्ननुदिनं
स्वानंदमास्वादयन् ।
ज्ञात्वा यं परमेति मुक्तिवपुषं
सोऽहं परात्मा स्वयम् ॥ ८ ॥

अर्थः— १जिस (प्रत्यक् अभिन्न परमात्मा) कूं २जानिके [स्थूलसूक्ष्मकारणभेदतें] ३त्रिविधप्रपंचके निश्चित ४मिथ्यापनेकूं मनसें स्मरण करता हुया । ५ देहादिकके मानकूं त्यागता हुया । देहरूप उपाधिके किये भेदकूं नाश करता हुया । ६मनकूं निर्मल (अचंचल) ७करता हुया । ८निरंतर ९"मैं ब्रह्म हूं" ऐसें भावना करता हुया । १०स्वरूपानंदकूं आस्वादन करता हुया । उभय ११मुक्तिस्वरूप १२परब्रह्मकूं पा-

वताहै। १३सो १४परमात्मा आप १५मैं हूं॥८॥

अब उक्तविचारआदिक साधनोंविषे अ-समर्थ मंदबुद्धिवाले पुरुषनके अर्थ ज्ञानके नाना-साधन ज्ञान अरु मोक्षकूं कहते हुये स्वस्वरूपका अनुसंधान करै हैः—

ईशेस्य स्मरणं द्विधा ह्यनुदिनं
तन्नामसंकीर्तनं।
वा गंगास्नपनं सुकृत्य पठनं
गीतास्मृतेः प्रत्यहम्॥
सत्संसद्गमनं स्वकर्म यजनं
दानं सुदत्त्वा शुचिर्।
ज्ञात्वा यं परमेति मुक्तिवपुषं
सोऽहं परात्मा स्वयम्॥ ९॥

अर्थः— १निरंतर २ईश्वरके सगुण निर्गुण भेदतैं ३द्विविध ४स्मरण (चिंतनरूप उपासन) कूं। ५वा ६निरंतर ता (ईश्वर)के नामके सम्यक् (चित्तकी एकाग्रतापूर्वक) कीर्तनकूं।

वा ७गंगास्नानकूं। वा ८प्रतिदिन ९गीतास्मृतिके १०पाठकूं। वा प्रतिदिन ११संतोंकी सभाविषै गमनकूं। वा १२स्वकर्म (अपने वर्णाश्रमके धर्म) कूं। वा प्रतिदिन १३यजन (भगवत्पूजन)कूं १४सुष्ठुप्रकारसैं करिके। वा १५दानकूं [सुष्ठु प्रकारसें श्रद्धापूर्वक सत्पात्रके अर्थ] देके। पवित्र हुया पुरुष १६जिसकूं १७जानिके १८मुक्ति-स्वरूप १९परब्रह्मकूं पावता है। २०सो २१पर-मात्मा आप २२मैं हूं ॥ ९ ॥

अब "स्वानुभवादर्श" शब्दके अर्थसहित ताके प्रयोजनकूं कहै हैं:—

[1]येनास्मिन्विमले [2]सुवाक्यनिकरा-
दर्शे [3]विवेकान्विते।
सेवालेहसुदीसदेशिकवचो-
दीपप्रभोद्भासिते॥
शुद्धस्वांतदृशा हि पश्यति जनः
स्वात्मानमेवाद्वयं।

११तेन स्वानुभवाय वाय दयया-
ऽऽदर्शोऽयमादर्शितः ॥ १० ॥

अर्थः— १जिस कारणकरि २विमल (निर्दोष) औ ३विवेककरि युक्त औ सेवारूप तैलकरि प्रदीप्त जो गुरुके वचनरूप दीपककी प्रभा । तिसकरि प्रकाशित ४इस ५श्रेष्ठवाक्योंके समूहरूप दर्पणविषै ६अधिकारी जन ७शुद्ध अंतःकरणरूप चक्षुकरिहीं ८अद्वय (ब्रह्मसैं अभिन्न) ९स्वात्मायूंही १०देखताहै (अपरोक्ष जानताहै)। ११तिस कारणकरि १२शुभ १३ स्वानुभवके अर्थ १४यह १५आदर्श है । सो मुमुक्षुनके ऊपर १६दयाकरि १७दिखाया ॥ १० ॥

इति श्रीमद्बापुसरस्वतीपूज्यपादशिष्य पीतांबराख्यविदुषा विरचितः स्वानुभवादर्शः समाप्तः ॥ ११ ॥

-

शरीफ सालेमहंमद (काठियावाड) वेरावल.

दाउद शरीफ——श्रीभावनगर.

नीचे लिखे ग्रंथ हमारे वहासैं मिलैंगे औ डाक महसूल नहीं पडेगा मात्र वेल्युपेएबलका डाककमीशन पडेगा ॥ यह सर्वग्रंथ सारे हिंदुस्थानमैं जहां जहां पुस्तक बेचनेवाले है । उनोंसें बी मिल सकते हैं ॥

श्री विचारसागर ५५४ टिप्पणसहित औ श्रुति-
रत्नावलि तथा बडी अकारादि अनुक्रमणिका-
सहित तृतीयावृत्ति ... ... ३।
,, उक्ततृतीयावृत्ति उत्तमकागजकी ... ... ४।
श्रीसुंदरविलास । ज्ञानसमुद्र आदिक तृतीयावृ० २।
,, उक्ततृतीयावृत्ति उत्तमकागजकी ३
श्रीसटीकाअष्टावक्रगीता मूलकी भाषासहित. १
,, उक्तग्रंथ उत्तम पूठे औ कागजका.... ... १।॥
श्रीविचारचंद्रोदय । तृतीयावृत्ति ... ... ०॥।
श्रीपंचदशी । मूल औ टीकाकी भाषा । दो विभागमैं
(थोडेही ग्रंथ रहे है) १५
श्रीपंचदशीका प्रथम प्रकरण.... ... ... ०॥।
श्रीपंचदशीका प्रथम औ पंचम प्रकरण. ... १
श्रीपंचदशी मूलमात्र.... ... ... ०॥=

श्रीईशावास्योपनिषद् । मूल औ श्रीशंकरभाष्य अनुसार हिंदुस्थानीमें. ४
श्रीबालबोध टीकासहित. ... ... ०॥=
,, उक्तग्रंथ चित्रित कपडेके पूठेसहित. ... १
श्रीपदार्थमंजूषा (वेदांतपदार्थकोश ॥ आगे८०४पे) ३
श्रीवेदस्तुति । अन्वययुक्त । तथा गुर्जरभाषा ०।≠

॥ श्रीवेदांतविनोद ॥

इस नामसैं अनेक लघुग्रंथ प्रकट किये जाते हैं॥ तिनमें *ऐसी चिह्नवाले ग्रंथ छपे हैं ॥ प्रत्येक अंककी कीमत ०)-॥ रखी है। औ कोइबी ६ अंकका मात्र रु. ०॥ पडेगा ॥

*१ वेदांतपदावलि (श्रीविचारच- द्रोदयका सार)
*२ वेदांतपदार्थमंजूषा.
३ सूफीओंके गजल.
४ देवाजी भक्तके पद.
५ अज्ञाभक्तके पद-
६ प्रास्ताविकश्लोक अर्थ- सहित.
* ७ वेदांतस्तोत्रसंग्रह अर्थ- सहित. अंक ३-४-५-६

इनसें आदिलेके अनेक लघुग्रंथ उपरि लिखे क्रमसैं नहीं परंतु समयसंजोग अनुसार प्रकट किये जावेंगे ॥

ॐ

॥ श्रीवेदांतविनोद ॥

षष्ठअंक ॥ ६ ॥

॥ श्रीवेदांतस्तोत्रसंग्रह ॥ १ ॥

ब्रह्मनिष्ठपंडित श्रीपीतांबरजीकृत

भाषादीपिकासहित

सर्वमुमुक्षुके हितार्थ

शरीफ सालेमहंमदने

छपाई प्रकट किया ॥

श्रीमुंबईमें निर्णयसागरप्रेसमें छपा ॥

॥ संवत् १९४५—सन् १८८९ ॥

॥ प्रस्तावना ॥

मंगल ॥ दोहा ॥

श्रीगुरुके पद वंदिके यह वेदांतविनोद ॥
प्रकट करौं इसकरि सबैं सज्जन पावहु मोद १

बहुत मुमुक्षुजन श्रीमच्छंकराचार्यकृत औ अन्यमहात्माकृत संस्कृतस्तोत्रनकूं पाठ किंवा कंठ करते हैं। परंतु निष्ठाकी आरूढतामें उपयोगी तिन स्तोत्रनके अर्थ निश्चय करनेमें पराधीनताकूं अनुभव करते हैं। तातें परमकारुणिक ब्रह्मनिष्ठपंडित श्रीपीतांबरजी महाराजनें दयाकरिके स्तोत्रनकी भाषा करी है। औ संस्कृतमें अल्पअभ्यासवानकूं बी प्रत्येकशब्दके अर्थका बोध होवै। तातें मूलमें औ भाषामें अन्वयअनुसार अंकोंकूं रखे हैं॥

श्रीवेदांतविनोदके इस षष्ठअंकमें जितने स्तोत्र छपे है सो नीचे लिखे हैं —

श्रीदक्षिणामूर्तिस्तोत्रम् ॥ १२ ॥
श्रीपरापूजा ॥ १३ ॥
श्रीमनीषापंचकस्तोत्रम् ॥ १४ ॥
वतनसाहेबके गज़ल ॥ २ ॥

शरीफ सालेमहंमद.

॥ ॐ गुरुपरमात्मने नमः ॥

॥ श्रीवेदांतविनोद ॥

षष्ठअंक ॥ ६ ॥

॥ श्रीवेदांतस्तोत्रसंग्रहमारंभः ॥ ४ ॥

॥ अथ श्रीदक्षिणामूर्तिस्तोत्रम् १२

॥ शार्दूलविक्रीडितं छंदः ॥

विश्वं दर्पणदृश्यमाननगरी-
तुल्यं निजांतर्गतं ।
पश्यन्नात्मनि मायया बहिरिवो-
द्भूतं यथा निद्रया ॥
यः साक्षात्कुरुते प्रबोधसमये
स्वात्मानमेवाद्वयम् ।
तस्मै श्रीगुरुमूर्तये नम इदं
श्रीदक्षिणामूर्तये ॥ १ ॥

अर्थः-१दर्पणविषै दृश्यमान नगरीके तुल्य

निजांतरगत २विश्वकूं ३जैसें निद्राकारि (देखिये है।) तैसें ४मायाकारि बाहिर ५उद्भूतकी ६न्याई ७आत्माविषै ८देखताहुया। ९जो १०प्रबोधके समयमैं ११अद्वयरूप १२ स्वात्माकूंही १३साक्षात् (अपरोक्ष) करता है । १४तिस श्रीगुरुकी मूर्तिरूप १५श्रीदक्षिणामूर्तिके तांई १६यह १७नमस्कार होहु ॥ १ ॥

बीजस्यांतरिवांकुरो जगदिदं
प्राङ् निर्विकल्पं पुन-
र्मायाकल्पितदेशकालकलना-
वैचित्र्यचित्रीकृतम् ॥
मायावीव विजृंभयत्यपि महा-
योगीव यः स्वेच्छया ।
तस्मै श्रीगुरुमूर्तये नम इदं
श्रीदक्षिणामूर्तये ॥ २ ॥

अर्थः—१बीजके भीतर २अंकुरकी ३न्याई ४यह ५ जगत् ६पूर्व निर्विकल्प था। फिर मायाकरि कल्पितदेशकालकी कल्पनाके विचित्रताकरि चित्रकी न्याई किया है ॥ ७जो ८मायावीकी न्याई औ ९महायोगीकी न्याई १० स्वइच्छाकरि ११विजृंभण (विलास)कूं करताबी है। १२तिस श्रीगुरुमूर्तिरूप १३श्रीदक्षिणामूर्तिके ताँई १४यह १५नमस्कार होहु ॥ २ ॥

यस्यैव स्फुरणं सदात्मकमसत्
कल्पार्थगं भासते ।
साक्षात्तत्त्वमसीति वेदवचसा
यो बोधयत्याश्रितान् ॥
यत्साक्षात्करणाद्भवेन्न पुनरा-
वृत्तिर्भवाम्भोनिधौ ।
तस्मै श्रीगुरुमूर्तये नम इदं
श्रीदक्षिणामूर्तये ॥ ३ ॥

अर्थः–१जाहिका स्फुरण सत्स्वरूप हुया असत्के तुल्य अर्थोंविषै अनुस्यूत भासता है। औ २जो ३"तत्त्वमसि" इस वेदके वचनकरि ४आश्रितन (शरणागतन)कूं ५साक्षात् ६बोधन करै है। औ ७जिसके साक्षात्कारतें ८संसार-सागरविषै ९पुनरावृत्ति (पुनर्जन्म) १०होवै नहीं। ११तिस श्रीगुरुमूर्तिरूप १२श्रीदक्षिणामूर्तिके तांई १३यह १४नमस्कार होहु ॥ ३ ॥

नानाछिद्रघटोदरस्थितमहा-
दीपप्रभाभास्वरं ।
ज्ञानं यस्य तु चक्षुरादिकरण-
द्वारा बहिः स्पंदते ॥
जानामीति तमेव भांतमनुभा-
त्येतत्समस्तं जगत् ।
तस्मै श्रीगुरुमूर्तये नम इदं
श्रीदक्षिणामूर्तये ॥ ४ ॥

अर्थः—१नानाछिद्रवाले घटके उदरविषै स्थित महदीपके प्रभाकी न्याई। प्रकाशवाला २जाका ३ज्ञान ४तो चक्षुआदिकरणद्वारा बाहिर स्फुरता है। "मैं जानता हूं" ऐसें तिसीहीके भासमान होते ५यह समस्तजगत् ६पीछे भासता है। ७तिस श्रीगुरुमूर्तिरूप ८श्रीदक्षिणामूर्तिके ताई ९यह १०नमस्कार होहु ॥ ४ ॥

देहं प्राणमपींद्रियाण्यपि चलां
बुद्धिं च शून्यं विदुः।
स्त्रीबालांधजडोपमास्त्वहमिति
भ्रांता भृशं वादिनः ॥
मायाशक्तिविलासकल्पितमहा-
व्यामोहसंहारिणे।
तस्मै श्रीगुरुमूर्तये नम इदं
श्रीदक्षिणामूर्तये ॥ ५ ॥

अर्थः—१स्त्री बाल अंध अरु जडकी उपमावाले २ अतिशयवादी ३भ्रांत पुरुष ४ तौ ५देहकूं औ प्राणकूं बी औ इंद्रियनकूं बी औ चंचलबुद्धिकूं औ शून्यकूं ६"मैं हूं" ऐसैं ७जानते हैं। ८तिस ९मायाशक्तिके विलास (कार्य) रूप कल्पित महाव्यामोहके संहार करनेहारे १० श्रीगुरुमूर्तिरूप ११श्रीदक्षिणामूर्तिके ताईं १२यह नमस्कार होहु ॥ ५ ॥

राहुग्रस्तदिवाकरेंदुसदृशो
मायासमाच्छादनात् ।
सन्मात्रः करणोपसंहरणतो
योऽभूत्सुषुप्तः पुमान् ॥
प्रागस्वाप्समिति प्रबोधसमये
यः प्रत्यभिज्ञायते ।
तस्मै श्रीगुरुमूर्तये नम इदं
श्रीदक्षिणामूर्तये ॥ ६ ॥

अर्थः—१मायाकरि सम्पन्न डापनेतैं । २रा-हुकरि ग्रस्त सूर्य औ चद्रके तुल्य ३सत्‌मात्र-रूप ४जो ५पुरुष । ६करणोंके उपसहार (विलय) तै ७सुषुप्त ८होवैहै । औ ९जो १०बोध (जाग्रत) के समयविषै ११"मैं पूर्व सोयाथा" ऐसै १२प्रत्यभिज्ञाप्रत्यक्षका विषय करियै है । तिस श्रीगुरुमूर्तिरूप १३श्रीदक्षिणामूर्तिके ताईं १४यह १५नमस्कार होहु ॥ ६ ॥

बाल्यादिष्वपि जाग्रदादिषु तथा
सर्वास्ववस्थास्वपि
व्यावृत्तास्वनुवर्तमानमहमि-
त्यंतःस्फुरतं सदा ॥
स्वात्मानं प्रकटी करोति भजता
यो भद्रया मुद्रया ।
तस्मै श्रीगुरुमूर्तये नम इद
श्रीदक्षिणामूर्तये ॥ ७ ॥

अर्थः–१बाल्यआदिकनविषै बी । २तैसें ३जागृत्आदिक ४व्यावृत्त (परस्परभिन्न) ५सर्व अवस्थाकेविषै बी ६अनुवर्तमान । औ "मैं हूं" ऐसैं भीतर ७सदा ८स्फुरनेवाले ९स्वात्माकूं १०जो ११भजन करनेवालेके मध्य १२भद्रा-मुद्राकरि १३प्रकट करै है । १४तिस श्रीगुरु-मूर्तिरूप १५श्रीदक्षिणामूर्तिके ताईं १६यह १७नमस्कार होहु ॥ ७ ॥

विश्वं पश्यति कार्यकारणतया
स्वस्वामिसंबंधतः ।
शिष्याचार्यतया तथैव पितृपु-
त्राद्यात्मना भेदतः ॥
स्वप्ने जाग्रति वा य एप पुरुषो
मायापरिभ्रामितस् ।

तस्मै श्रीगुरुमूर्तये नम इदं
श्रीदक्षिणामूर्तये ॥ ८ ॥

अर्थः–१जो यह पुरुष मायाकरि चारिऔरतैं भ्रमकूं प्राप्त हुया । २स्वप्नविषै ३वा ४जाग्रत्विषै ५कार्यकारणभावकरि । औ स्वस्वामीसंबंधतैं औ शिष्यआचार्यभावकरि । तैसैंही पितापुत्रआदि स्वरूपकरि भेदतैं ६विश्वकूं देखता है । ७तिस श्रीगुरुमूर्तिरूप ८श्रीदक्षिणामूर्तिके ताईं ९यह १०नमस्कार होहु ॥ ८ ॥

भूरंभास्यनलोऽनिलोऽम्बरमह-
र्नाथो हिमांशुः पुमा-
नित्याभाति चराचरात्मकमिदं
यस्यैव मूर्त्यष्टकम् ॥
नान्यत् किंचन विद्यते विमृशतां
यस्मात्परस्माद्विभो-

१२तस्मै श्रीगुरुमूर्तये नम इदं
श्रीदक्षिणामूर्तये ॥ ९ ॥

अर्थः—१पृथ्वी जल तेज वायु आकाश सूर्य चंद्र औ पुरुष। ऐसैं २चराचरस्वरूप यह जिसीहींकी मूर्तिका अष्टक ३भासता है । औ ४विचार करनेवाले पुरुषनकूं जिस ५विभुरूप ६परमात्मातैं ७अन्य कछु बी ८नहीं ९विद्यमान है । १०तिस श्रीगुरुमूर्तिरूप ११श्रीदक्षिणामूर्तिके ताई १२यह १३नमस्कार होहु ॥ ९ ॥

सर्वात्मत्वमिति स्फुटीकृतमिदं
यस्मादमुष्मिंस्तवे ।
तेनास्य श्रवणात्तथार्थमनना-
द्ध्यानाच्च संकीर्तनात् ॥
सर्वात्मत्वमहाविभूतिसहितं
स्यादीश्वरत्वं स्वतः ।

सिध्येत्तत्पुनरष्टधा परिणतं
चैश्वर्यमव्याहतम् ॥ १० ॥

अर्थः—१जातैं इस स्तोत्रविषै २ऐसैं ३यह ४ सर्वात्मभाव ५स्पष्ट किया है। ६तिस हेतुकरि याके श्रवणतैं तथा अर्थके मननतैं औ ध्यानमैं औ संकीर्तनतैं। सर्वआत्मभावरूप महाविभूतिकरि सहित ७ईश्वरभाव स्वतःसिद्ध होवै है। सो फेर अष्टप्रकारसैं परिणामकूं पाया हुया ८अव्याहत (अभंग) ९ऐश्वर्य १०होवै है ॥ १० ॥

॥ इति श्रीभाषाटीकासहितं श्रीमच्छंकराचार्यविरचितं दक्षिणामूर्तिस्तोत्रं समाप्तम् ॥१२॥

॥ अथ श्रीपरापूजा प्रारंभः ॥१३॥

॥ अनुष्टुप् छंदः ॥

पूर्णस्यावाहनं कुत्र सर्वाधारस्य चासनम् ।
स्वच्छस्य पाद्यमर्घ्यं च शुद्धस्याचमनं कुतः॥१॥

अर्थ–१पूर्णका आवाहन कहां होवैगा ।२औ ३सर्वाधारका ४आसन कहां होवैगा । औ स्वच्छका पाद्य ५अरु ६अर्घ्य औ ७शुद्धकूं आचमन कहांतें होवैगा ॥ १ ॥

निर्मलस्य कुतः स्नानं वस्त्रं विश्वोदरस्य च ।
निरालंबस्योपवीतं पुष्पं निर्वासनस्य च ॥२॥

अर्थः–१निर्मलकूं २स्नान ३कहांतें होवैगा । ४औ ५विश्वोदरकूं ६वस्त्र अरु ७निरालंबकूं उपवीत (जनोई) ८अरु ९निर्वासनकूं १०पुष्प कहांतें होवैगा ॥ २ ॥

निर्लेपस्य कुतो गंधो रम्यस्याभरणं कुतः ।
नित्यतृप्तस्य नैवेद्यं तांबूलं च कुतो विभोः॥३॥

अर्थः—१निर्लेपकूं २गंध ३कहांतें होवैगा । औ ४रम्य (रमणीय)कूं आभरण कहांतें होवैगा । औ नित्यतृप्त ५विभुकूं ६नैवेद्य ७अरु ८तांबूल ९ कहांतें होवैगा ॥ ३ ॥

प्रदक्षिणा ह्यनंतस्य ह्यद्वयस्य कुतो नतिः ।
वेदवाक्यैरवेद्यस्य कुतः स्तोत्रं विधीयते ॥४॥

अर्थः—१प्रसिद्धअनंतकी २प्रदक्षिणा औ ३प्रसिद्धअद्वितीयकूं ४नति ५कैसें होवैगी । औ ६वेदवाक्योंकरि अवेद्यका ७स्तोत्र ८कहां ९विधान करियेहै ॥ ४ ॥

स्वयं प्रकाशमानस्य कुतो नीराजनं विभोः ।
अंतर्बहिश्च पूर्णस्य कथमुद्वासनं भवेत् ॥ ५ ॥

अर्थः—१स्वयंप्रकाशमान २विभुका ३नीराजन (आरार्तिक) ४कहांतैं होवैगा । औ ५भीतर अरु बाहिर पूर्णका ६उद्वासन (विसर्जन)७कैसैं ८होवै ॥ ९ ॥

ऐवमेव परापूजा सर्वावस्थासु सर्वदा ।
एकबुद्ध्या तु देवेशे विधेया ब्रह्मवित्तमैः॥६॥

अर्थः—१इसप्रकारसैंहीं परापूजा सर्वअवस्थाओंविषै सर्वदा एकबुद्धिसे तौ देवेशविषै २ब्रह्मवित्तमोंकरि ३कर्तव्य है ॥ ६ ॥

॥ इति श्रीभाषाटीकासहिता परापूजा समाप्ता ॥ १३ ॥

अथ श्रीमनीषापंचकस्तोत्रम् ॥ १४ ॥

॥ अनुष्टुप् छंदः ॥

सैंन्याचार्यस्य गमने
कदाचिन्मुक्तिदायकम् ।
काशीक्षेत्रंप्रति सह
गौर्या मार्गे तु शंकरम् ॥ १ ॥
अंत्यवेषधरं दृष्ट्वा
गच्छगच्छेति चाब्रवीत् ।
शंकरः सोऽपि चांडालस्-
तं पुनः प्राह शंकरम् ॥ २ ॥

अर्थः—१कदाचित् मुक्तिदायक काशीक्षेत्रके प्रति २श्रीशंकराचार्य गमन ३करते थे। तहां ४मार्गविषे तो ५गौरी ६सहित ७चांडालवेषधारी८शंकरकूं ९देखिके । १०श्रीशंकराचार्यस्वामी ११"गच्छ गच्छ (रस्ता छोड)" ऐसै कहते भये॥ १२सो१३चांडाल१४बी१५तिस१६ श्रीशंकराचार्यकूं१७फेर कहता भयाः—॥१—२॥

॥ आर्यावृत्त ॥

अन्नमयादन्नमय-
मथवा चैतन्यमेव चैतन्यात् ।
द्विजवर दूरीकर्तुं
वांछसि किं ब्रूहि गच्छ गच्छेति ॥३॥

अर्थः—१हे द्विजवर (कर्मजड) ! २तूं ३"गच्छ गच्छ" ऐसें [कहनेकरि] ४अन्नमयतें अन्नमयकूं अथवा ५चैतन्यतें ६चैतन्यकूंही ७दूरि करनेकूं इच्छताहै ? सो ८कथन कर ॥ ३ ॥

॥ शार्दूलविक्रीडितं छंदः ॥

किं गंगांबुनि बिंबितेऽवरमणौ
चांडालवाटीपयः ।
पूरे वांतरमस्ति कांचनघटी
मृत्कुंभयोर्वांबरे ॥
प्रत्यग्वस्तुनि निस्तरंगसहजा-
नंदावबोधांबुधौ ।

विप्रोऽयं श्वपचोऽयमित्यपि महान्
[1]कोऽयं विभेदभ्रमः ॥ ४ ॥

अर्थः–१क्या गंगाजलविषै २वा ३चांडालनके गर्छीके जलके पूरमैं ४ प्रतिबिंबित सूर्यविषै ५वा ६सुवर्णके घट औ मृत्तिकाके घटमैं ७आकाशविषै ८भेद है? (किंतु नहीं है)॥ ९निस्तरंग सहजआनंद अरु ज्ञानके समुद्ररूप १०प्रत्यगात्मवस्तुविषै ११"यह १२विप्र है १३यह १४चांडाल है" । १५ऐसा बी १६कौन यह १७बडा १८भेदभ्रम [तुमकूं भया] है ! ॥ ४ ॥

जाग्रत्स्वप्नसुषुप्तिषु स्फुटतरा
या संविदुज्जृंभते ।
या ब्रह्मादिपिपीलिकांततनुषु
प्रोता जगत्साक्षिणी ॥
सैवाहं न च दृश्यवस्त्विति दृढ-
प्रज्ञापि यस्यास्ति [1]चेच्

चांडालोऽस्तु स तु द्विजोऽस्तु गुरुरि-
त्येषा मनीषा मम ॥ ५ ॥

अर्थः—तहां श्रीशंकराचार्यस्वामी कहै हैं:—१जो संवित् (चिति) २जागृत्स्वप्न अरु सुषुप्तिविषै अत्यंतस्पष्ट ३विलसती है। औ ४जगत्‌की साक्षीरूप ५जो (संवित्) ब्रह्मासैं आदिलेकै चीटिपर्यंत शरीरनविषै ओतप्रोत है। ६"सोई मैं हूं ७औ दृश्यवस्तु ८नहीं है"। ९ऐसी दृढबुद्धि बी १०जब ११जाकूं है। १२सो तो १३चांडाल हो वा १४द्विज हो। परंतु सर्वका गुरु है। ऐसी यह १५मेरी १६बुद्धि (निश्चयरूपवृत्ति) है ॥५॥

ब्रह्मैवाहमिदं जगच्च सकलं
चिन्मात्रविस्तारितम् ।
सर्वं चैतदविद्यया त्रिगुणया
शेषं मया कल्पितम् ॥
इत्थं यस्य दृढा मतिः सुखतरे
नित्ये परे निर्मले ।

चांडालोऽस्तु स तु द्विजोऽस्तु गुरुरि-
त्येषा मनीषा मम ॥ ६ ॥

अर्थः—१मैं २थी सकल चिन्मात्ररूप विस्तारित ३यह जगत् ४ब्रह्मही है। ५औ ६सर्व ७संपूर्ण ८यह ९त्रिगुणरूप १०अविद्यासैं ११मुजकरि कल्पित है । ऐसी जाकी दृढमति अत्यंतसुखरूप नित्य १२निर्मल १३परब्रह्मविषै है। १४सो तो १५चांडाल हो वा १६द्विज हो। परंतु गुरु है। ऐसी यह १७मेरी १८बुद्धि है॥६॥

शश्वन्नश्वरमेव विश्वमखिलं
निश्चित्य वाचा गुरो-
र्नित्यं ब्रह्म निरंतरं विमृशता
निर्व्याजशांतात्मना ॥
भूतं भावि च दुष्कृतं प्रदहता
संविन्मये पावके ।

प्रारब्धाय समर्पितं स्ववपुरि-
त्येषा मनीषा मम ॥ ७ ॥

अर्थः–१संपूर्ण २विश्वकूं ३निरंतर नश्वरही है। ऐसें ४गुरुके ५वचनतें ६निश्चय करिके ७नित्य ८निरंतर ९ब्रह्मकूं १०निष्कपट शांत-चित्तकरि ११विचारवाले। १२भूत १३औ १४ भावी १५पापकूं १६संवित् (ज्ञान) मय अग्निविषै १७दहन करनेवाले जिसने १८अपना शरीर १९प्रारब्धके अर्थ समर्पण किया है। सो गुरु है २०ऐसी यह २१मेरी २२बुद्धि है॥ ७॥

या तिर्यङ्नरदेवताभिरहमि-
त्यन्तः स्फुटा गृह्यते।
यद्भासा हृदयाक्षदेहविषया
भांति स्वतोऽचेतनाः॥
तां भास्यैः पिहितार्कमंडलनिभां
स्फूर्तिं सदा भावयन्।

योगी निर्वृतमानसो हि गुरुरि-
त्येषा मनीषा मम ॥ ८ ॥

अर्थः—१जो (स्फूर्ति) तिर्यक् नर औ देवता वोंकरि "मैं हूं" ऐसैं अंतःकरणविषै स्पष्ट ग्रहण करिये है। औ जिसके प्रकाशकरि २स्वतः अचेतनरूप ३अंतःकरण इंद्रिय देह औ विषय भासते हैं। ४तिस भास्य (प्रकाश्य बादलन) करि ढांपेसूर्यमंडलके तुल्य स्फुर्तिकूं सदा भावना करताहुया योगी (ज्ञानी) ५जातैं ६आनंदितमनवाला होवै है। तातैं ७गुरु है। ऐसी यह ८मेरी ९बुद्धि है ॥ ८ ॥

यत्सौख्यांबुधिलेशलेशत इमे
शक्रादयो निर्वृता।
यश्चित्ते नितरां प्रशांतकलने
लब्ध्वा मुनिर्निर्वृतः ॥

यस्मिन्नित्यसुखांबुधौ गलितधी-
र्ब्रह्मैव न ब्रह्मवित् ।
कश्चित्स सुरेंद्रवंदितपदो
नूनं मनीषा मम ॥ ९ ॥

अर्थः—१जिस आनंदसमुद्रके लेशतैं ये इंद्रादिक आनंदित हैं । औ २मुनि जो है सो ३निरंतर प्रशांतकल्पनावाले ४चित्तविषे ५जिसकूं ६पायके ७आनंदित होवैहै । औ ८नित्यसुखके समुद्ररूप ९जिसविषे १०गलितबुद्धिवाला पुरुष ब्रह्महीं है ११ब्रह्मवित् १२नहीं । ऐसा जो १३ कोईबी है सो सुरेंद्रकरि वंदितपदवाला निश्चयकरि गुरु है । ऐसी १४मेरी १५बुद्धि है ॥ ९ ॥

॥ इति भाषाटीकासहितं मनीषापंचकस्तोत्रम् समाप्तम् ॥ १४ ॥

दीवाने वतनमेंसें

॥ गजॅल ॥ १ ॥

("गइ एक न एक जो हवा पलट" की राह)

खुदाइ कहता है जिस्कु आलम्
सो ये भि है एक खियाल मेरा ।
बदलना सूरत् हजॉर ढबसे
हरेक दम्में है हाल मेरा ॥ १ ॥

अर्थः—जिसकूं लोक ईश्वर कहते हैं सो मात्र मेरी कल्पनाहीं है औ हजारप्रकारसे जो प्राणियोंकी आकृतीका पलटना है । सो तिनोंके प्रत्येक श्वासमें मेरी स्थितिकूं बोधन करे है ॥१॥

कहीं सजन्जल् कहीं हुं सूरत्
कहीं हुं दीद् और कहीं हुं हैरत् ।
नजॅर हुइं है नसीब जिन्कु
वो देखते हैं जमाल मेरा ॥ २ ॥

अर्थः—कहुं आभास तो कहुं बिंबरूप हूं। कहुं दर्शन तो कहुं दृश्यरूप हूं। परंतु जिनोंकूं गुरुकपासे ज्ञानचक्षु प्राप्त भई है सो मेरे स्वरूपकूं देखते हैं ॥ २ ॥

कहीं हुँ सूरज कहीं हुँ जॅर्रा
  कहीं हुँ दरिया कहीं हुँ कतरा।
वफोरे कसरत्से अपने मुजकु
  हुवा है मिलना महाल मेरा ॥ ३ ॥

अर्थः—यद्यपि कहुं सूर्य तो कहुं अणुरूप हूं॥ कहुं समुद्र तो कहुं बिंदुरूप हूं। तथापि प्रपंचदृष्टिसें मेरेकूं मेरा मिलना दुर्लभ भया है॥ ३ ॥

तलस्मे इसरारे गन्जे मख़फि
  कहूँ न सीनेकुं अपने क्युं कर्।
अयाँ हुवा हाले हर्दो आलम्
  हुवा जो जॉहिर कमाल मेरा ॥ ४ ॥

अर्थः—गुप्तरत्नखाणिका यह एक चमत्कार

है। सो मैं अपने अंतःकरणकूं किस वासते न कहुं? जबसे मेरा ऐश्वर्य प्रकट भया है तबसे दोनूंलोक (इसलोक और परलोक)का मर्म स्पष्ट हो गया है ॥ ४ ॥

हिजाबे खुर्शेद जातेमानि
हुवा जहूरे नमूदे सूरत।
मिटा जो दुनियासे नाम आदम्
हुवा है मुजकु विसाल मेरा ॥ ५ ॥

अर्थः—नामरूपके प्रकट होनेसें लक्ष्यस्वरूप सूर्यकूं आवरण भया। परंतु जबसे जगतमेंसे आदम नामका नाश भया तबसे मेरेकूं मेरी प्राप्ती भई है ॥ ५ ॥

हमेशा आंखुंकु बंध रखना
जमाल मानिका देखना है।
जो गोशेकर हैं वो है समाअत्
जो बेजबानि है काल मेरा ॥ ६ ॥

अर्थः—निरंतर बहिरमुखदृष्टीरूप नेत्रनकूं ढांपना लक्ष्यस्वरूपका देखना है। जो एकांतमें बैठे हैं सो श्रवण करते हैं। तैसें मैं जिह्वारहितकाही यह कथन है ॥ ६ ॥

"अलस्तो कालूवला" कि रम्जें
न पूछ मुजसे वतन तु हर्गिज़्।
हुँ आप मशगूल आप शागिल्
जवाव खुद् है सवाल मेरा ॥ ७ ॥

अर्थः—वतन साहेब कहते हैंः—"मैं[1] तुमारा ईश्वर हूं या नहीं? अवश्य हो" इस विनोदकूं हे मुमुक्षु! तूं मुजसे कदाचित् वारंवार मति पूछ ॥ सुन कहता हूंः— मैंही बंध भया हूं औ मैंही बंधका कर्ता हूं औ उक्तप्रश्न मेरा है तथा उत्तर बी मेराही है ॥ ७ ॥

१ ऐसा प्रसंग है कि "सृष्टिके आदिकालमें परमेश्वरने सर्वजीवनकूं पूछा जो 'मैं तुमारा ईश्वर हूं या नहीं'? तब कितनेक जीवोंने उत्तर दिया जो 'अवश्य हो'" ॥

("तफरका होता है ऐसा भी" इत्यादिक राह)
मैं न बन्दा न खुदा था मुजें मालूम न था ।
दोनु इल्लतसें जुदा था मुजें मालूम न था ॥१॥
अर्थः—मैं जीव नहीं था औं ईश्वर बी नहीं था परंतु दोनूंउपाधिसैं न्यारा था । इतना मेरेकूं ज्ञात नहीं था ॥ १ ॥
शिक्ले हैरत् हुइ आईनये दिलसें पैदा ।
मानिये शाने सफा था मुजें मालूम न था॥२॥
अर्थः—अंतःकरणरूप दर्पणसें एक आश्चर्यरूप मूर्ति प्रकट हुई । तिसका अर्थरूप बिंब निर्मल था । परंतु मेरेकूं ज्ञात नहीं था ॥ २ ॥
देखता था मैं जिसे होके नदीदा हर्स् ।
मेरी ऑखोंमें छुपा था मुजें मालूम् न था॥३॥
अर्थः—जिसकूं मैं चक्षुरहित होईके सर्वदिशावोंमें देखता था । वो मेरी चक्षुर्में गुप्त था । यह वृत्तांत मेरेकूं ज्ञात नहीं था ॥ ३ ॥
आपही आप हो याँ तालिबो मतलूब है कौन्।
मैं जो आशक् हुं कहा था मुजें मालूम् न था ॥४

अर्थः—अपना आप होनेतैं इहां मुमुक्षु औ मोक्ष क्या है? अज्ञानदशामें ऐसे कहता था कि "मैं आशक्र हूं" परंतु उक्तअनुभव मेरेकूं ज्ञात नहीं था॥४

दिल्के आईनेकुँ मैं रूबरू रख कर् देखा।
आपका रूये सफा था मुजें मालूम् न था॥५॥

अर्थः—अंतःकरणरूप दर्पणकूं मैंनें सन्मुख राखिके देखा तो यद्यपि मेरा मुख निर्मल था तथापि सो मेरेकूं ज्ञात नहीं था॥ ५ ॥

वजे मालूम हुई तुजसे न मिल्नेकि सनम्।
मैं हिं खुद् पर्दे हुवा था मुजें मालूम् न था॥६॥

अर्थः—हे प्रिय! तेरेसैं योग करनेकी युक्ति मेरेकूं ज्ञात न हुई। काहेतैं जो मैंही आप आवरण भया था। यह मेरेकूं ज्ञात नहीं था॥ ६ ॥

बोंदे मुद्दत् जो हुवा वस्ल खुला राजें वतन्।
वासिले हक्में सदा था मुजें मालूम् न था॥७॥

अर्थः—दीर्घकाल्के पीछे जब ब्रह्मात्माकी प्राप्ति भई तब मर्म खुल गया जो मैं वतन सत्यस्वरूपमें सर्वदा एकरस पूर्वसैंही था। परंतु यह मेरेकूं ज्ञात नहीं था।७

शरीफ सालेमहंमद (काठियावाड) वेरावल.

दाउद शरीफ—श्रीभावनगर.

नीचे लिखे ग्रंथ हमारे वहासे मिलेंगे औ डाक महसूल नहीं पडेगा मात्र वेल्युपेएबलका डाककमीशन पडेगा ॥ यह सर्वग्रंथ सारे हिंदुस्थानमें जहां जहां पुस्तक बेचनेवाले हैं उनोंसें भी मिल सकते हैं ॥

श्रीविचारसागर ५५४ टिप्पणसहित औ वृत्तिरत्नावली तथा बडी अकारादि अनुक्रमणिकासहित तृतीयावृत्ति ... ... ३।

,, उक्ततृतीयावृत्ति उत्तमकागजकी . ... ४।

श्रीसुंदरविलास । ज्ञानसमुद्र आदिक तृतीयावृ० २।

,, उक्ततृतीयावृत्ति उत्तमकागजकी ३

श्रीसटीकाअष्टावक्रगीता मूलकी भाषासहित. १

,, उक्तग्रंथ उत्तम पूठे औ कागजका.... ... १॥।

श्रीविचारचंद्रोदय । तृतीयावृत्ति ... ... ०॥।

श्रीपंचदशी । मूल औ टीकाकी भाषा । दो विभागमें (थोडेही ग्रंथ रहे हैं) १५

श्रीपंचदशीका प्रथम प्रकरण.... ... . . ०॥

श्रीपंचदशीका प्रथम औ पंचम प्रकरण. ... १

श्रीपंचदशी मूलमात्र.... ... ... ०॥—

श्रीईशाद्यष्टोपनिषद् । मूल औ श्रीशंकरभाष्य अनुसार हिंदुस्थानीमें ४

श्रीबालबोध टीकासहित. ... ... ०॥=

,, उक्तग्रंथ चिनित कपडेके पूठेसहित ... १

श्रीपदार्थमंजूषा (वेदांतपदार्थकोश ॥ आगे६०४थे) ३

श्रीवेदस्तुति । अन्वययुक्त । तथा गुर्जरभाषा ०।-

॥ श्रीवेदांतविनोद ॥

इस नामसैं अनेक लघुग्रंथ प्रकट किये जाते हैं ॥ तिनमें ऐसै चिह्नवाले ग्रंथ छपे हैं ॥ प्रत्येक अंककी कीमत ०)-॥ रखी है । औ पोष्टखर्च ६ अंकका मात्र य ०॥ पडेगा ॥

×१ वेदांतपदावलि (श्रीविचारचंद्रोदयका सार)

×२ वेदांतपदार्थसंज्ञा.

३ सूफीओंके गजल.

४ देवाजी भक्तके पद.

५ अखाभक्तके पद.

६ प्रस्ताविकश्लोक अर्थसहित.

×७ वेदांतस्तोत्रसंग्रह अर्थसहित. अंक ३-४-५ ६

८ श्रीदीवानेँ वतन.

९ श्रीशंकराचार्यकृत अपरोक्षानुभूति आदिक.

१० श्रीयोगवासिष्ठमेंसे दृष्टांत दार्ष्टांत मूलसहित.

इनसें आदिलेके अनेक लघुग्रंथ उपरि लिखे क्रमसैं नही परंतु समयसंजोग अनुसार प्रकट किये जावेंगे ॥

ॐ

॥ श्रीवेदांतविनोद ॥

सप्तम अंक ॥ ७ ॥

॥ श्रीमहावाक्यविवेक ॥

तत्त्वप्रकाशिकाव्याख्या सहित

ब्रह्मनिष्ठपंडित श्रीपीतांबरजीकृत

सर्वमुमुक्षुके हितार्थ

शरीफ सालेमहंमदने

छपाई प्रकट किया ॥

श्रीमुंबईमें निर्णयसागरप्रेसमें छपा ॥

॥ संवत् १९४६—सन् १८८९ ॥

॥ प्रस्तावना ॥

मंगल ॥ दोहा ॥

श्रीगुरुके पद वंदिके यह वेदांतविनोद ॥
प्रकट करौं इस करि सर्व सज्जन पावहु मोद १

इन लघुग्रंथनसैं वेदांतनिष्ठ महापुरुषोंकूं विनोद होवै औ मुमुक्षुनकूं आत्मज्ञानका अभ्यास होईके परमपदकी प्राप्ति होवै । ऐसै दो हेतुकूं चित्तविषै राखिके प्रकट किये जाते हैं ॥

श्रीपंचदशी जैसा वेदांतविषै उत्कृष्ट मननसहायक प्रक्रियाकी दृढतामैं उपयोगी अन्यग्रंथ नहीं है ॥ पूर्व सन् १८७६ मैं (१४ वर्षसैं पूर्व) यह ग्रंथ दो विभागमैं ब्रह्मनिष्ठपंडित श्रीपीतांबरजी महाराजकृत तत्त्वप्रकाशिकाव्याख्यासहित मैंने छपवाया था ॥ इसमैं श्रीमहावाक्यविवेक नामक पंचम लघुप्रकरण है । सो इस अंकमैं प्रकट किया है ॥ अंतमैं श्रीपंचदशीके प्रस्ताविक श्लोक अर्थसहित रखे हैं ॥

इसीअंककी रूढीपर पूर्णपंचदशी छपावनेका मैंने संकल्प किया है । सो हरिइच्छाकरि कालपाइके सिद्ध होवैगा ॥

शरीफ सालेमहंमद.

॥ ॐ गुरुपरमात्मने नमः ॥

॥ श्रीवेदांतविनोद ॥

सप्तम अंक ॥ ७ ॥

श्री पंचदशीगत

श्रीमहावाक्यविवेकनाम

पंचमप्रकरणप्रारंभः ॥ ५ ॥

॥ भाषाकर्त्ताकृत मंगलाचरण ॥

श्रीमत्सर्वगुरून् नत्वा पंचदश्या नृभाषया ।
महावाक्यविवेकस्य कुर्वे तत्त्वप्रकाशिकाम्॥१॥

अर्थः—श्रीयुक्तसर्वगुरुनकूं नमनकरिके नर-भाषासैं पंचदशीके महावाक्यविवेक नाम पंचम-

---

१ च्यारिमहावाक्यनका है विवेक (विभाग) जिस-विषै सो ॥

प्रकरणकी तत्त्वप्रकाशिका (नाम व्याख्या) मैं करूं हूं ॥ १ ॥

॥संस्कृतटीकाकारकृत मंगलाचरण॥

नत्वा श्रीभारतीतीर्थविद्यारण्यमुनीश्वरौ ।
महावाक्यविवेकस्य कुर्वे व्याख्यां समासतः १

अर्थः–श्रीमत् भारतीतीर्थ औ विद्यारण्य इन दोमुनीश्वरनकूं नमनकरिके महावाक्यविवेककी व्याख्या मैं संक्षेपतें करूं हूं ॥ १ ॥

॥१॥ ऋग्वेदकी ऐतरेयउपनिषद्गत "प्रज्ञानं ब्रह्म" इस महावाक्यका अर्थ ॥२८७–२८८॥

॥१॥ "प्रज्ञान" पदका अर्थ ॥२८७॥

॥२८७॥ मुमुक्षुनकूं मोक्षका साधन जो ब्रह्मआत्माकी एकताका ज्ञान है। तिसकी सिद्धिअर्थ प्रसिद्ध (च्यारिवेदनमें प्रगट) जो च्यारि-

महावाक्य हैं तिनके अर्थकूं क्रमतें निरूपन करते हुये परमकृपालुआचार्य्य (श्रीविद्यारण्यस्वामी) आदिविषै प्रथम ऋग्वेदकी ऐतरेयारण्यकगत "प्रज्ञानं ब्रह्म" (प्रज्ञान ब्रह्म है) इस महावाक्यविषै "प्रज्ञान" शब्द (पद) के अर्थकूं कहै हैं:—

येनेक्षते शृणोतीदं जिघ्रति व्याकरोति च।
स्वाद्वस्वादु विजानाति तत् प्रज्ञानमुदीरितम् १

["येन इदम् ईक्षते शृणोति जिघ्रति व्याकरोति च स्वाद्वस्वादु विजानाति तत् प्रज्ञानम् उदीरितम्"] जिस (चैतन्य) करि पुरुष इस (रूपादिक)कूं देखता है औ शब्दकूं सुनता है औ गंधकूं सूंघता है औ शब्दकूं बोलता है औ स्वादुअस्वादु (रस)कूं जानता है सो (वृत्तिउपलक्षित चैतन्य) "प्रज्ञान" कह्या है ॥ १ ॥

प्रकरणकी तत्त्वप्रकाशिका (नाम व्याख्या) मैं करूं हूं ॥ १ ॥

॥संस्कृतटीकाकारकृत मंगलाचरण॥

नत्वा श्रीभारतीतीर्थविद्यारण्यमुनीश्वरौ ।
महावाक्यविवेकस्य कुर्वे व्याख्यां समासतः १

अर्थः–श्रीमत् भारतीतीर्थ औ विद्यारण्य इन दोमुनीश्वरनकूं नमनकरिके महावाक्यविवेककी व्याख्या मैं संक्षेपतैं करूं हूं ॥ १ ॥

॥१॥ ऋग्वेदकी ऐतरेयउपनिषद्गत "प्रज्ञानं ब्रह्म" इस महावाक्यका अर्थ ॥२८७–२८८॥

॥१॥ "प्रज्ञान" पदका अर्थ ॥२८७॥

॥२८७॥ मुमुक्षुनकूं मोक्षका साधन जो ब्रह्मआत्माकी एकताका ज्ञान है। तिसकी सिद्धि-अर्थ प्रसिद्ध (च्यारिवेदनमैं प्रगट) जो च्यारि-

महावाक्य हैं तिनके अर्थकूं क्रमतें निरूपन करते हुये परमकृपालुआचार्य्य (श्रीविद्यारण्यस्वामी) आदिविषै प्रथम ऋग्वेदकी ऐतरेयारण्यकगत "प्रज्ञानं ब्रह्म" (प्रज्ञान ब्रह्म है) इस महावाक्यविषै "प्रज्ञान" शब्द (पद) के अर्थकूं कहैं हैंः–

येनेक्षते शृणोतीदं जिघ्रति व्याकरोति च ।
स्वाद्वस्वादु विजानाति तत्प्रज्ञानमुदीरितम् १

["येन इदम् ईक्षते शृणोति जिघ्रति व्याकरोति च स्वाद्वस्वादु विजानाति तत् प्रज्ञानम् उदीरितम्"] जिस (चैतन्य) करि पुरुष इस (रूपादिक)कूं देखता है औ शब्दकूं सुनता है औ गंधकूं सूंघता है औ शब्दकूं बोलता है औ स्वादुअस्वादु (रस)कूं जानता है सो (वृत्तिउपलक्षित चैतन्य) "प्रज्ञान" कह्या है ॥ १ ॥

टीकाः–जिस चक्षुद्वारा निर्गत (निकसी) अंतःकरणकी वृत्तिउपहित (साक्षी)चैतन्यकरि इस देखनैयोग्य रूपआदिककूं पुरुष (संघातरूप पुरुष) देखता है । तैसैं श्रोत्रद्वारा निर्गत अंतःकरणवृत्तिरूप उपाधिवाले जिस (चैतन्य)करि पुरुष शब्दके समूहकूं सुनता है । तैसैंही घ्राण (नासिका)द्वारा निर्गत अंतःकरणवृत्तिरूप उपाधिवाले जिस (चैतन्य)करि पुरुष गंधके समूहकूं सूंघता है । औ जिस वाक्इंद्रिय अवच्छिन्न (उपहित)चैतन्यकरि पुरुष शब्दके समूहकूं बोलता है । औ रसनइंद्रियद्वारा निर्गत अंतःकरणवृत्तिरूप उपाधिवाले जिस (चैतन्य)करि स्वादुअस्वादु दोनूंभांतिके रसकूं पुरुष जानता है ॥ इहां (मूलश्लोकविषै) जो "च" शब्द है । सो अनुक्त (नहीं कहे अन्यइंद्रियन)के समुदाय (ग्रहण)अर्थ है ॥ तैसैं

हुये कही औ नहीं कही सकलइंद्रिय औ अंतःकरणकी वृत्तिनकरि उपलक्षित जो (कूटस्थ) चैतन्य है। सोइ इहां ("प्रज्ञानं ब्रह्म" इस महावाक्यविषै) "प्रज्ञान" ऐसैं कहिये है ॥ यह अर्थ है ॥ इस कहनेकरि। जिसकरि "प्रसिद्धि देखता है" इस आदिवाला औ "सर्वहीं यह प्रज्ञानके नामधेय (नाम) हैं" इस अंतवाला जो अवांतर (आत्माके स्वरूपके बोधक) वाक्यका समूह है तिसका अर्थ संक्षेपकरिके दिखाया ॥१॥

॥ २ ॥ "ब्रह्म" पदका अर्थ औ (एकतारूप) वाक्यार्थ ॥ २८८ ॥

॥२८८॥ ऐसैं "प्रज्ञान" शब्दके अर्थकूं कहिके "ब्रह्म" शब्दके अर्थकूं कहै हैं:—

चतुर्मुखेंद्रदेवेषु मनुष्याश्वगवादिषु ।
चैतन्यमेकं ब्रह्मातः प्रज्ञानं ब्रह्म मय्यपि॥२॥

["चतुर्मुखेंद्रदेवेषु मनुष्याश्वगवादिषु एकं चैतन्यं ब्रह्म"] चतुर्मुख (ब्रह्मा) इंद्र देवनविषै औ मनुष्य अश्व गौआदिकनविषै जो एकचैतन्य है सो ब्रह्म है॥

· टीकाः–उत्तम जो देवादिक हैं औ मध्यम जो मनुष्य हैं औ अधम जो अश्वगौआदिक हैं तिन सर्वदेहधारिनविषै औ आकाशआदिकभूतनविषै जगत्‌के जन्मआदिक (स्थितिलय)का हेतुरूप जो एकचैतन्य है सो ब्रह्म है ॥ यह अर्थ है ॥ इस कहनेकरि "*यह (ज्ञानरूप आत्मा) ब्रह्मा है । यह इंद्र है*" इस आदिवाला । औ "प्रज्ञा (ज्ञानरूप चैतन्य) प्रतिष्ठा (सर्वका अधिष्ठान) है" इस अंतवाला । जो अवांतर (ब्रह्मके स्वरूपका बोधक) वाक्यका समूह है तिसका अर्थ संक्षेपकरिके दिखाया ॥

ऐसें, "प्रज्ञान" औ "ब्रह्म" इन पदनके अर्थकूं

काहिके वाक्य (पदसमुदायरूप)के अर्थकूं कहै हैं:–

[" अतः मयि अपि प्रज्ञानम् ब्रह्म "]

यातैं मेरेविषै वी (स्थित) प्रज्ञान ब्रह्म है ॥२॥

टीकाः– जातैं सर्व देव मनुष्य पशु आकाशादिकविषै स्थित प्रज्ञान ब्रह्म है । यातै मेरेविषै बी स्थित प्रज्ञान ब्रह्म है ॥ काहेतैं । प्रज्ञानपनैंके अविशेष (समानपनै)तैं ॥ यह अर्थ है ॥२॥

॥२॥ यजुर्वेदकी बृहदारण्यकउपनिषद्गत " अहं ब्रह्मास्मि " इस महावाक्यका अर्थ ॥ २८९-२९० ॥

॥१॥ "अहं" पदका अर्थ ॥ २८९ ॥

॥२८९॥ ऐसैं ऋग्वेदकी शाखाविषै स्थित वाक्यके अर्थकूं निरूपण करिके अब यजुर्वेदकी शाखाऊंके मध्यमैं जो बृहदारण्यकउपनिषद् है

तिसविषै गत " अहं ब्रह्मास्मि (मैं ब्रह्म हूं) " इस महावाक्य (जीवब्रह्मकी एकताके बोधक वाक्य)के अर्थके प्रकट करनैवास्ते " अहं " शब्दके अर्थकूं कहै हैं:–

परिपूर्णः परात्माऽस्मिन्देहे विद्याऽधिकारिणि
बुद्धेः साक्षितया स्थित्वा स्फुरन्नहमितीर्यते २

[" परिपूर्णः परात्मा विद्याधिकारिणि अस्मिन् देहे बुद्धेः साक्षितया स्थित्वा स्फुरन् अहम् इति ईर्यते "] परिपूर्ण परमात्मा । विद्या (ज्ञान)के अधिकारी इस देहविषै बुद्धिका साक्षी होनेकरि स्थित होयके जो स्फुरता है । सो " अहं " (मैं) इस पदकरि कहिये है ॥ २ ॥

टीकाः– परिपूर्ण कहिये स्वभाव (स्वरूप) तैं देशकालवस्तुकरि अपरिच्छिन्न जो परमात्मा है । सो इस (मायाकरि कल्पितजगत्)विषै

विद्याके अधिकारी (शमआदिकसाधनयुक्त होनैकरि ब्रह्मविद्या संपादनके योग्य) इस (श्रवणादिकके अनुष्ठानवाले) मनुष्यादिशरीरविषै बुद्धि (बुद्धिकरि उपलक्षित सूक्ष्मशरीर)के साक्षी (अविकारीपनैसैं अवभासक) होनैकरि स्थित होयके स्फुरता (प्रकाशमान) है। सो लक्षणासैं "अहं" पदकरि कहिये है ॥ यह अर्थ है ॥३॥

॥२॥ "ब्रह्म" पदका अर्थ औ "अस्मि" पदके अर्थकरि (एकतारूप) वाक्यार्थ ॥ २९० ॥

॥२९०॥ "ब्रह्म" शब्दके अर्थकूं कहै हैं:–

स्वतः पूर्णः परात्माऽत्र ब्रह्मशब्देन वर्णितः।
अस्मीत्यैक्यपरामर्शस्तेन ब्रह्म भवाम्यहम् ४॥

["स्वतः पूर्णः परात्मा अत्र ब्रह्मशब्देन वर्णितः"] स्वतः पूर्ण परमात्मा जो है। सो

इहां "ब्रह्म" शब्दकरि वर्णन किया है ॥

टीकाः– स्वतः परिपूर्ण । कहिये स्वभावतैं देशकालादिकरि अनवच्छिन्न (अपरिच्छिन्न) जो पूर्व (२८९वें श्लोकविषै) उक्त परमात्मा है। सो इहां ("अहं ब्रह्मास्मि" इस महावाक्य-विषै) "ब्रह्म" शब्दकरि वर्णन किया (ल-क्षणासैं कह्या) है ॥ यह अर्थ है ॥

इस वाक्यगत "अस्मि" इस पदकरि दोनूं ("अहं" अरु "ब्रह्म" । इन) पदनके सा-

२ भिन्नअर्थयुक्त (अपर्याय) पदनकी समानविभक्तिके बलसैं एकही अर्थविषै जो प्रवृत्ति । सो सामानाधिकरण्य कहिये है ।। इहां (इस वाक्यविषै) "अहं" औ "ब्रह्म" ये दोपद क्रमतैं आत्मा औ ब्रह्मरूप अर्थके बोधक हैं। यातैं भिन्नअर्थयुक्त (अपर्याय) है । परंतु समान (प्रथमा) विभक्तिके बलसैं तिन दोपदनकी अखंडएकरसतारूप एकहीं अर्थविषै प्रवृत्ति (लक्षणासैं वर्तना) है । सो सामानाधिकरण्य है । तिसहीतैं ब्रह्मात्माकी एकता सिद्ध है ॥

मानाधिकरण्यसैं लभ्य (प्राप्य) जो जीव ब्रह्मकी एकता है । सो स्मरण करिये है । ऐसैं कहै हैं:–

["अस्मि इति ऐक्यपरामर्शः"] "अस्मि" यह पद एकताका परामर्शक (स्मरण करावनैहारा) है ॥

फलित (वाक्यार्थ) कूं कहै हैं:–

["तेन अहम् ब्रह्म भवामि"] तिस (हेतु) करि "मैं ब्रह्मही हूं ॥ ४ ॥

॥३॥ सामवेदकी छांदोग्यउपनिषद्-गत "तत्त्वमसि" इस महावाक्य-का अर्थ ॥ २९१-२९२ ॥

॥ १ ॥ "तत्" पदका अर्थ ॥२९१॥

॥२९१॥ अब सामवेदकी छांदोग्यउपनि-

तिसका "अस्मि" पद स्मरण करावनैहारा है। अन्य अर्थका बोधक "अस्मि" पद नहीं है ॥

पदगत "तत्त्वमसि" (सो तूं है) इस महावाक्यके अर्थके प्रकाश करनेवास्ते "तत्" (सो) पदके लक्ष्य (लक्षणावृत्तिके विषय) अर्थकूं कहे हैंः–

एकमेवाद्वितीयं सन् नामरूपविवर्जितम् ।
सृष्टेः पुराऽधुनाऽप्यस्य तादृक्त्वं तदितीर्यते ५

["सृष्टेः पुरा एकम् एव अद्वितीयम् नामरूपविवर्जितम् सत्। अस्य अधुना अपि तादृक्त्वम् तत् इति ईर्यते"] सृष्टितैं पूर्व एकहीं अद्वितीय नामरूपरहित जो सत् था। इस (सत्)का अब (सृष्टिके पीछे) बी तैसेपना। "तत्" (सो) ऐसैं कहिये है ॥ ५ ॥

टीकाः– "हे सोम्य यह (जगत्) आगे एकहीं अद्वितीयरूप सत्‌हीं था"। इस श्रुति-

३ "तत्त्वमसि" यह सामवेदकी छांदोग्यउपनिषद्‌के षष्ठप्रपाठक (अध्याय) गत महावाक्य है। सो नववार उपदेश किया है ॥

वाक्यकरि सृष्टितैं पूर्व स्वगतादिभेदशून्य औ नामरूपरहित जो सत्वस्तु प्रतिपादन किया है। इस (सद्वस्तु)का अब (सृष्टितैं उत्तरकालविषै) बी विचारदृष्टिसैं जो तैसैपना (स्वगतादिभेदरहित नामरूपवर्जित सत्पना) है। सो "तत्" इस पदकरि कहिये (लक्षणासैं जानिये) है ॥ यह अर्थ है ॥ ९ ॥

॥२॥ "त्वं" पदका अर्थ औ "असि" पदके अर्थकरि (एकतारूप) वाक्यार्थ ॥ २९२ ॥

॥२९२॥ "त्वं" पदके लक्ष्यअर्थकूं कहै हैं:–

श्रोतुर्देहेंद्रियातीतं वस्त्वत्र त्वंपदेरितम् ।
एकता ग्राह्यतेऽसीति तदैक्यमनुभूयताम्॥६॥

[" श्रोतुः देहेंद्रियातीतं वस्तु अत्र त्वंपदेरितम् "] श्रोताके देहइंद्रियतैं अतीत जो

वस्तु (सत्रूप आत्मा) है। सो इहां "त्वं" पदकरि कहिये है ॥

टीकाः— श्रवणादिकके अनुष्ठानसैं महावाक्यके अर्थकी प्रतिपत्ति (निश्चय) करनैहारा जो श्रोता है । तिसके देहइंद्रियतैं अतीत कहिये देह औ इंद्रियतैं उपलक्षित स्थूलसूक्ष्मआदि (कारण)रूप तीनशरीर हैं । तिनका साक्षी होनैकरि तिनतैं विलक्षण सद्वस्तु है । सो महावाक्यगत "त्वं" इस पदकरि लक्षित (लक्षणासैं जान्या) है ॥ यह अर्थ है ॥

इस वाक्यमैं स्थित "असि" (है) इस पदकरि "तत्" औ "त्व" इन पदनके सामानाधिकरण्यसैं लब्ध (प्राप्त) जो दोनूंपदनके अर्थ (ब्रह्म औ आत्मा)की एकता (सिद्ध) है । सो शिष्यके ताईं प्रतीति कराइये है। ऐसैं कहे हैंः—

[" 'असि' इति एकता ग्राह्यते "]

" असि (है) " इस पदकरि एकता ग्रहण कराइये है ॥

इस निरूपणकरि सिद्ध भया जो अर्थ (वाक्यार्थ) ताकूं कहै हैं:-

[" तदैक्यं अनुभूयताम् "] यातें तिनकी एकता अनुभव करना ॥ ६ ॥

टीकाः- याते तिन " तत् " औ " त्वं " पदके अर्थ (ब्रह्म आत्मा)की प्रमाणसिद्ध एकता मुमुक्षुजनोंकरि अनुभव (साक्षात्) करनी चाहिये ॥ यह अर्थ है ॥ ६ ॥

॥४॥ अथर्वणवेदकी मांडूक्यउपनिषद्गत " अयमात्मा ब्रह्म " इस महावाक्यका अर्थ ॥२९३-२९४॥

॥१॥ "अयं" औ "आत्मा" पदका अर्थ ॥२९३॥

॥२९३॥ अब क्रमतैं प्राप्त अथर्वणवेदकी मांडूक्यउपनिषद्गत "अयमात्मा ब्रह्म" (यह आत्मा ब्रह्म है)। इस महावाक्यके अर्थकूं व्याख्या करनेकूं इच्छते हुये आचार्य। आदिविषै "अयं" (यह) औ "आत्मा" (आप) इन दोपदनकरि विवक्षितअर्थकूं क्रमकरि दिखावै हैं:—

स्वप्रकाशापरोक्षत्वमयमित्युक्तितो मतम्।
अहंकाराऽऽदिदेहांतात् प्रत्यगात्मेति गीयते ७

["'अयम्' इति उक्तितः स्वप्रकाशापरोक्षत्वं मतम्"] "अयं" इस उक्ति (पद)

---

४ यह अथर्वणवेदकी मांडूक्यउपनिषद्गत महावाक्य है॥ जातें "सर्वं यह (उक्त ॐकारमात्र जगत्) ब्रह्म है" यातें "अयं आत्मा ब्रह्म (यह आत्मा ब्रह्म है) सो यह आत्मा च्यारीपादवाला है" [२]॥ इहां जाननेकी सुगमताअर्थ धान्यके परिमाणमैं उपयोगी कर्षापणप्रस्थादिककी न्याई पादकल्पना है। गौकी न्याई नहीं॥ इति॥

करि आत्माका स्वप्रकाशपनेकरि युक्त अप-रोक्षपना मान्याहै ॥

टीकाः–"अयं" इस उक्ति (शब्द)करि साक्षीका स्वप्रकाशताकरि (युक्त) अपरोक्षपना अभिमत (मान्या) है ॥ अदृष्ट (धर्मअधर्म) आदिकनकी न्याई नित्यपरोक्षपना औ घटादिकनकी न्याई दृश्यपना (परप्रकाशतायुक्त अपरोक्षपना) इन दोनूं (अनात्मधर्मन)कूं आत्मातैं निवारण करनेकूं मूलविषै "स्वप्रकाश" औ "अपरोक्षपना" ये दोविशेषण हैं। ऐसैं जानना॥

देहआदिकविषै बी आत्मशब्दके प्रयोग (योजना)के देखनैतैं। इस महावाक्यविषै "आत्म" शब्दकरि क्या कहनैकूं इच्छित है? इस आकांक्षा (पूछनेकी इच्छा)के हुये कहै हैं:–

[" अहंकारादि देहांतात् प्रत्यक्आत्मा इति गीयते "] अहंकारसैं आदिलेके दे-

हपर्यंत जो (संघात) है। तिसतें जो प्रत्यक् (आंतर) है। सो "आत्मा" ऐसैं कहिये है ॥ ७ ॥

टीकाः–अहंकार है आदि जिस (प्राण मन इंद्रिय देहरूप संघात)का। सो (संघात) अहंकारादि है ॥ तैसैं देह है अंत जिस (कथन किये संघात)के। सो (संघात) देहांत (देहपर्यंत) कहिये है ॥ तिस (अहंकारसैं आदिलेके देहपर्यंत संघात) तैं जो प्रत्यक् है। कहिये तिस (संघात)का अधिष्ठान होनेकरि औ साक्षी होनेकरि आंतर जो (चेतन) है। सो इस महावाक्यविषै "आत्मा" ऐसैं गाइये (कहिये) है ॥ यह अर्थ है ॥ ७ ॥

॥२॥ "ब्रह्म" पदका अर्थ औ एकतारूप वाक्यार्थ ॥२९४॥

॥२९४॥ ब्राह्मण आदिकविषै भी "ब्रह्म"

शब्दके प्रयोग (योजना)के देखनैतैं । तिन (ब्रह्मणादिकन)तै व्यावर्तन (भेद जनावनै) वास्ते इस महावाक्यविषै "ब्रह्म" शब्दके विवक्षितअर्थकूं कहै हैं:–

दृश्यमानस्य सर्वस्य जगतस्तत्त्वमीर्यते ।
ब्रह्मशब्देन तद् ब्रह्म स्वप्रकाशात्मरूपकम् ८

["दृश्यमानस्य सर्वस्य जगतः तत्त्वम् 'ब्रह्म'–शब्देन ईर्यते"] दृश्यमानसर्वजगत्का जो तत्त्व (वास्तवस्वरूप) है । सो "ब्रह्म" शब्दकरि कहिये है ॥

टीकाः– दृश्य होनैकरि मिथ्यारूप जो सर्व (आकाशादिकजगत्) है । तिसका तत्त्व । कहिये अधिष्ठान होनैंकरि औ तिस (उक्तजगत्)के बाधका अवधि (सीमा) होनैंकरि पारमार्थिक (वास्तविक) सच्चिदानंदलक्षणयुक्त जो स्वरूप

है । सो इस महावाक्यविषै "ब्रह्म" शब्दकरि कहिये है ॥ यह अर्थ है ॥

वाक्य (पदसमुदाय)के अर्थकूं कहै हैं:–

["तद् ब्रह्म स्वप्रकाशात्मरूपकम्"]

सो ब्रह्म स्वप्रकाश आत्मस्वरूप है ॥ ८ ॥

टीकाः– जो उक्तलक्षणवाला ब्रह्म है । सोई स्वप्रकाशआत्म (अपना)स्वरूप है ॥ यह ब्रह्म-आत्माकी एकतारूप वाक्यका अर्थ है ॥ (इस-रीतिसैं कह्या जो च्यारिमहावाक्यनका अर्थ ब्रह्म (आत्माकी एकता) ताकूं जिस जिस प्रक्रिया-विषै रुचि होवै तिस तिस प्रक्रियाकी रीतिसैं विवेकवैराग्यआदिक च्यारीसाधनसंयुक्त हुये मुमुक्षुजनोंनै वेदांतशास्त्र औ ब्रह्मनिष्ठगुरुके मुखद्वारा वाच्यअर्थ औ लक्ष्यअर्थके विचारकरि पदार्थ-शोधनपूर्वक यथार्थ जानिके श्रवणमननादिद्वारा संशयविपर्ययकूं निवारण करि दृढअपरोक्षनिष्ठासैं

अज्ञान औ ताके कार्यरूप अनर्थकी निवृत्ति औ परमानंदकी प्राप्तिरूप जीवन्मुक्ति औ विदेहमुक्तिका अनुभव करना योग्य है ॥ इति ॥ ८ ॥

इति श्रीमत्परमहंस परिव्राजकाचार्य्य
बापुसरस्वतीपूज्यपादशिष्य पीतांबराव्हविदुषा विरचिता पंचदश्या महावाक्यविवेकस्य तत्त्वप्रकाशिकाख्या व्याख्या
समाप्ता ॥ ५ ॥

॥ श्रीपंचदशीके प्रस्ताविक श्लोक ॥

मायाविद्ये विहायैवमुपाधी परजीवयोः ।
अखंडं सच्चिदानंदं परं ब्रह्मैव लक्ष्यते॥४८॥

अर्थ.—१ऐसे २पर औ जीवकी ३उपाधि ४माया औ अविद्याकूं छोडिके ५अखंड सच्चिदानंद परब्रह्मही लखिये है (प्र. वि. ॥४८॥)

चोद्यं वा परिहारो वा क्रियतां द्वैतभाषया।
अद्वैतभाषया चोद्यं नास्ति नापि तदुत्तरम्२९

अर्थ.—१चोद्य (प्रश्न) वा परिहार (उत्तर) २द्वैतकी भाषाकरि ३करिये है औ ४अद्वैतकी भाषा करि चोद्य नहीं है औ ५तिस (प्रश्न) का उत्तर ६बी ७नहीं है (पं. वि. ॥१०४॥)

बाढं निद्रादयः सर्वेऽनुभूयंते न चेतरः।
तथाऽप्येतेऽनुभूयंते येन तं को निवारयेत्३२

अर्थः—१"निद्रा (आनंदमय)आदिक सर्व (कोश) अनुभूत (अनुभवके विषय) होवै हैं २औ तिनतें भिन्न आत्मा अनुभूत ३नहीं होवै है" । यह (तेरा कथन) ४सत्य है । ५तथापि ६जिस (अनुभव) करि ७यह (पंचकोश) अनुभव करिये हैं ८तिस (अनुभव)कूं कौन (पुरुष) निवारण (निषेध) करैगा ? कोइबी करी शके नहीं (पं. वि. ॥ १८६ ॥)

जलपाषाणमृत्काष्ठवास्याकुद्दालकादयः।
ईश्वराः सर्व एवैते पूजिताः फलदायिनः २०८

अर्थः—१जल । पाषाण । मृत्तिका । काष्ट । वास्या (काष्टके छीलनेका साधन)। कुद्दालक आदिक हैं। २यह ३सर्वहीं ४ईश्वर हैं औ ५पूजन किये हुये ६फलदायक हैं (चि. दी ॥ १०२ ॥)

न निरोधो न चोत्पत्तिर्न बद्धो न च साधकः।
न मुमुक्षुर्न वै मुक्त इत्येषा परमार्थता ॥२२९॥

अर्थः—न निरोध है। न उत्पत्ति है। न बद्ध है। न साधक है। न मुमुक्षु है। औ न मुक्त है। ऐसें यह परमार्थता (वास्तवता) है (चि. दी. ॥ १२९ ॥)

अप्रवेश्य चिदात्मानं पृथक् पश्यन्नहंकृतिम्।
इच्छंस्तु कोटिवस्तूनि न बाधो ग्रंथिभेदतः२६२

अर्थः—अहंकारविषे १चिदात्माकूं २अप्रवेश

करिकै । ३अहंकारकूं चिदात्मातैं ४भिन्न देख-ताहुआ ५कोटिवस्तुनकूं ६इच्छै तौबी ७ग्रं-थिके भेदतैं (साक्षी आत्माका वा बोधमोक्षका) ८बाध ९नहीं है (चि. दी. ॥ ९९६ ॥)

प्रारब्धकर्मनानात्वाद् बुद्धानामन्यथाऽन्यथा वर्तनं तेन शास्त्रार्थे भ्रमितव्यं न पंडितैः॥२८७

अर्थः—१प्रारब्धकर्मके नाना होनेकरि । बुद्ध (ज्ञानिन)का अन्यथा अन्यथा (और और प्रकारसैं) वर्त्तना है । तिस (विलक्षणवर्त्तनै) करि २पंडितजनोंनैं ३ शास्त्रके अर्थविषे ४भ्र-मणा (भ्रांत होना) योग्य नहीं है (चि. दी. ॥ ९८१ ॥)

आत्मानं चेद्विजानीयादयमस्मीति पूरुषः । किमिच्छन्कस्य कामाय शरीरमनुसंज्वरेत्॥

अर्थः—१पुरुष (जीव) २आत्माकूं ३"यह मैं हूं" इसप्रकार ४जब जानै तब ५किस (भो-

ग्यविषय)कूं इच्छता हुया किस (भोक्ता)के काम (भोग)अर्थ शरीरके पीछे ज्वर (संताप)कूं पावै ? (तृ. दी. ॥ १८९ ॥)

देहाऽऽत्मज्ञानवत् ज्ञानं देहाऽऽत्मज्ञानबाधकं।
आत्मन्येव भवेद् यस्य स नेच्छन्नपि मुच्यते २०

अर्थः—१देहरूप आत्माके ज्ञानकी न्याई २ आत्मविषैंही ३देहात्मज्ञानका बाधक ४ज्ञान ५जिसकूं ६ होवै । ७ सो नहीं इच्छता हुया बी मुक्त होवै है (तृ. दी ॥ ६०४ ॥)

जनकादेः कथं राज्यमिति चेद् दृढबोधतः ।
तथा तवाऽपि चेत् तर्कं पठ यद्वा कृषिं कुरु१२०

अर्थः—१"जनकादिककूं राज्य कैसें भया?" ऐसे जो कहै । तो दृढबोधतें (जनकादिककूं राज्य भया) । २तेरेकूं बी जो ३तैसें (दृढबोध) होवै तौ ४तर्ककूं पठन कर यद्वा कृषि (खेती)कूं कर (तृ. दी. ॥ ७१४ ॥)

अवश्यं भावि भावानां प्रतीकारो भवेद् यदि ।
तदा दुःखैर्न लिंप्येरन् नैलरामयुधिष्ठिराः १५

अर्थः—१अवश्य होनेहारे जो भाव (दुःखादिक) हैं । तिनका प्रतीकार (निवृत्तिका उपाय) २जब ३होवै । ४तब ५नल राम औ युधिष्ठिर ६दुःखनकरि ७लिप्त होते ८नहीं (सो बी दुःखग्रस्त भये । यातैं सो अनिवार्य है) (तृ. दी. ॥ ७४० ॥)

जाग्रत्स्वप्नसुषुप्त्यादिप्रपंचं यत् प्रकाशते ।
तद् ब्रह्माहमिति ज्ञात्वा सर्वबंधैः प्रमुच्यते२१.२

अर्थः—१"जो ब्रह्म । २जाग्रत्–स्वप्न–सुषुप्ति–आदिकप्रपंचकूं ३प्रकाशता है । सो ब्रह्म मैं हूं" ऐसे जानिके सर्वबंधनतैं मुक्त होवै है (तृ. दी ॥ ७९७ ॥)

दुःखिनोऽज्ञाः संसरंतु कामं पुत्राद्यपेक्षया ।
परमानंदपूर्णोऽहं संसरामि किमिच्छया॥२९८

अर्थः—१दुःखी जो अज्ञानी हैं। सो २जैसें ३इच्छा होवै तैसें पुत्रादिकनकी अपेक्षासें ३इस-लोकसंबंधी व्यवहारकूं करहु औ ४परमानंद-करि पूर्ण जो मैं हूं सो ५किसकी इच्छा करि ६व्यवहारकूं करों? (तृ. दी. ॥ ८३९ ॥)

नित्यानुभवरूपस्य को मे वाऽनुभवः पृथक् ।
कृतं कृत्यं प्रापणीयं प्राप्तमित्येव निश्चयः १६६

अर्थः—१नित्य (उत्पत्तिनाशरहित) अनु-भवरूप २मेरेकूं ३कौन ४अनुभव भिन्न है? (कोई बी नहीं) ॥ जो ५करनेयोग्य था सो ६किया औ ७ प्राप्त होनेयोग्य था सो पाया। यहहीं मेरा निश्चय है (तृ. दी. ॥ ८९० ॥)

अनुभूतेरभावेपि ब्रह्मास्मीत्येव चिंत्यताम् ।
अप्यसत्प्राप्यते ध्यानान्नित्याप्तं ब्रह्म किं पुनः

अर्थः—१अनुभूतिके अभाव हुये बी "मैं ब्रह्म हूं" ऐसेंही चिंतन करना। २असत् (अ-

विद्यमानं वस्तु) ३ची ४ध्यानतैं ५प्राप्त होवै है। तब ६फेर ७नित्यप्राप्त जो ब्रह्म सो ध्यानतैं प्राप्त होवै यामैं क्या (कहना) है (ध्या.दी.॥११३॥)

भिद्यते हृदयग्रंथिश्छिद्यंते सर्वसंशयाः ।
क्षीयंते चास्य कर्माणि तस्मिन् दृष्टे परावरे ॥७

अर्थः—१तिस २परावर (परमात्मा)के ३दृष्ट (देखे) हुये ४इस (पुरुष)का ५हृदयग्रंथि ६भेदनकूं पावता है औ ७सर्वसंशय ८छेदन होवै है ९औ १० कर्म ११ क्षीण (नाश) होवै है (ब्र. यो. ॥ ११४९ ॥)

असाध्यः कस्यचिद्योगः कस्यचिज्ज्ञाननिश्चयः
इत्थं विचार्य मार्गौ द्वौ जगाद परमेश्वरः ॥८३

अर्थः—१किसी (अधिकारी)कूं योग २असाध्य (दुष्कर) है औ ३किसीकूं ज्ञानका निश्चय असाध्य है । ऐसैं विचार करिके ४परमेश्वर (श्रीकृष्ण) । ५दोनूं (योग औ विवेकरूप) ६मार्गनकूं ७कहते भये (ब्र. आ. ॥१३९९॥)

शरीफ सालेमहंमद—वेरावल (काठियावाड).
दाउद शरीफ—श्रीभावनगर.

नीचे लिखे ग्रंथ हमारे वहांसें मिलेंगे औ डाक महसूल नहीं पडेगा मात्र वेल्युपेएबलका डाककमीशन पडेगा ॥ यह सबग्रंथ सारे हिंदुस्थानमें जहां जहां पुस्तक वेचनेवाले हैं उनोंसें बी मिल सकते हैं ॥

श्रीविचारसागर ५५४ टिप्पणसहित औ वृत्तिरत्नावली तथा घडी अकारादि अनुक्रमणिकासहित तृतीयावृत्ति ... ... ३।

,, उक्ततृतीयावृत्ति उत्तमकागजकी ... ... ४।

श्रीसुंदरविलास । ज्ञानसमुद्र आदिक तृतीयावृ० २।

,, उक्ततृतीयावृत्ति उत्तमकागजकी ३

श्रीसटीकाअष्टावक्रगीता मूलकी भाषासहित. १

,, उक्तग्रंथ उत्तम पूठे औ कागजका.... ... १॥।

श्रीविचारचंद्रोदय । तृतीयावृत्ति ... ... ०॥।

श्रीपंचदशी । मूल औ टीकाकी भाषा । दो विभागमें (थोडेही ग्रंथ रहे हैं) १५

श्रीपंचदशीका प्रथम प्रकरण.... ... ... ०॥।

श्रीपंचदशीका प्रथम औ पंचम प्रकरण. ... १

श्रीपंचदशी मूलमात्र.... ... ... ०॥=